# स्मारिका

द्वि - दिवसीय वैज्ञानिक संगोष्ठी

## सामाजिक परिप्रेक्ष्य में परमाणु ऊर्जा का बहुआयामी कार्यक्रम

04-05 मार्च 2011 (शुक्रवार एवं शनिवार)

स्थल : राजस्थान पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, बीकानेर

**❁ आयोजक ❁**

हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई

राजस्थान पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान
विश्वविद्यालय, बीकानेर

सहयोगी संस्था : नागरी भंडार ट्रस्ट, बीकानेर

**❁ संपादन ❁**

जयप्रकाश त्रिपाठी
राजेश कुमार मिश्र
कवींद्र पाठक
अनिल कुमार अहिरवार

## स्थानीय आयोजन उप समितियाँ

**स्वागत समिति**
प्रो. एस.बी.एस.यादव
श्री. रमेश चन्द्र पंत
डॉ. आर.एन. कच्छावा
डॉ. जी.एस. मनोहर
डॉ. आर.के. तँवर
डॉ. बी.के. बेनीवाल
डॉ. सी.के. मुरडिया
श्री. एस.एस. पवार (कुलसचिव)
श्री. एल.एन. गहलोत (वित्त नियंत्रक)
श्री. एच.एन. सनाढ़य (संपदा अधिकारी)
डॉ. हेमंत दाधीच (संयोजक)

**पंजीकरण समिति**
श्री. दीनानाथ सिंह
श्री. सत्यप्रभात प्रभाकर
डॉ. दीपिका गोखलानी
श्री. कपिल देव प्रसाद अम्बष्ट
श्री. एम.सी. गोयल
श्री. किशन चंद
डॉ. ए.पी. सिंह - संयोजक

**वैज्ञानिक एंव तकनीकी समिति**
डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल
डॉ. अनिल दाधीच
डॉ. जगदीश चन्द्र व्यास
श्री. कवीन्द्र पाठक
श्री. राजेश कुमार मिश्र
श्री. प्रकाश कुमार दुबे
श्री. अनिल कुमार अहिरवार
श्री. जयप्रकाश त्रिपाठी (संयोजक)

**अनुशासन समिति**
डॉ. राकेश राव
डॉ. सी.एस. ढाका
डॉ. सुभाष गोस्वामी - संयोजक

**जन संपर्क व प्रचार-प्रसार समिति**
डॉ. पी.आर. भाटी
डॉ. राजेश धूरिया
डॉ. आर.एन. कछावा - संयोजक

**परिवहन समिति**
डॉ. वी.के. चौधरी
डॉ. अशोक डॉगी

**खान-पान समिति**
डॉ. त्रिभुवन शर्मा
डॉ. राजेश धूरिया

**सांस्कृतिक समिति**
डॉ. राकेश माथुर
डॉ. लक्ष्मी नारायण साखला

# हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद
# भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई
# एवं
# राजस्थान पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, बीकानेर
# द्वारा आयोजित
# द्वि - दिवसीय वैज्ञानिक संगोष्ठी
# सामाजिक परिप्रेक्ष्य में परमाणु ऊर्जा का बहुआयामी कार्यक्रम
## शुक्रवार, 04 मार्च 2011, प्रात: 10.00 बजे
## स्थल: सभागृह, राजस्थान पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, बीकानेर
## उद्घाटन समारोह : प्रात: 10.00-11.30 बजे

## - कार्यक्रम विवरण -

| | | |
|---|---|---|
| 1. | दीप प्रज्जवलन व स्वागत गीत | आमंत्रित अतिथियों द्वारा |
| 2. | स्वागत अभिभाषण | डां. एस.बी.एस. यादव, अधिष्ठाता, राजस्थान पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर |
| 3. | हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद के बारे में | डॉ. कृष्णा बी. सैनिस, अध्यक्ष, हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद |
| 4. | संगोष्ठी परिचय | श्री. जयप्रकाश त्रिपाठी, संयोजक एवं सचिव,हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद |
| 5. | संगोष्ठी स्मारिका विमोचन | |
| 6. | मुख्य अतिथि का संबोधन | माननीय मुख्य अतिथि के कर कमलों द्वारा |
| 7. | अध्यक्षीय उदबोधन(विशेष वार्ता) | प्रो. अजय कुमार गहलोत, कुलपति, राजस्थान पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, बीकानेर |
| 8. | धन्यवाद ज्ञापन | हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद की ओर से |

द्वि - दिवसीय वैज्ञानिक संगोष्ठी

"सामाजिक परिप्रेक्ष्य में परमाणु ऊर्जा का बहुआयामी कार्यक्रम"

04 - 05 मार्च 2011 (शुक्रवार एवं शनिवार)

तकनीकी सत्र

दिनांक :- 04-03-2011 (शुक्रवार)

प्रथम वार्ता सत्र :- 12.00 - 13.30

| क्र. स. | वार्ता विषय | वार्ताकार | समय |
|---|---|---|---|
| 1. | परमाणु चिकित्सा तकनीकों का पशु चिकित्सा में उपयोग- वर्तमान एवं भविष्य की संभावनाएं । | प्रो. अजय कुमार गहलोत | 12.00 - 12.30 |
| 2. | खाद्य पदार्थ का विकिरण द्वारा प्रसंस्करण व परिरक्षण | डॉ. अरुण कुमार शर्मा | 12.30 - 13.00 |
| 3. | भारत की ऊर्जा आत्मनिर्भता में नाभिकीय ऊर्जा की भूमिका | श्री. स्वप्नेश कुमार मल्होत्रा | 13.00 - 13.30 |

भोजन : 13.30 - 14.15

द्वितीय वार्ता सत्र :- 14.15 - 17.00

| क्र. स. | वार्ता विषय | वार्ताकार | समय |
|---|---|---|---|
| 1. | विकिरण प्रौद्योगिकी का सामाजिक समृध्द में उपयोग | डॉ. अनिल कुमार कोहली | 14.15 - 14.45 |
| 2. | कृषि के क्षेत्र में नाभिकीय प्रौद्योगिकी का उपयोग | डॉ. एस.एफ. डिसूजा | 14.45 - 15.15 |
| 3. | परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम का पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान के क्षेत्र में योगदान | प्रो.एस.बी.एस. यादव | 15.15 - 15.45 |

चाय :- 15.45 - 16.00

| क्र. स. | वार्ता विषय | वार्ताकार | समय |
|---|---|---|---|
| 4. | नाभिकीय ऊर्जा प्रेरित औद्योगिक एवं कृषि कार्यक्रम की विवेचना | श्री. विनय कुमार श्रीवास्तव | 16.00 - 16.30 |
| 5. | रेडियों समस्थानिकों का पशु पोषण में योगदान | डॉ. त्रिभुवन शर्मा | 16.30 - 17.00 |

सांस्कृतिक कार्यक्रम :- 19.00 - 20.30

रात्रि सहभोज :- 20.30

द्वि - दिवसीय वैज्ञानिक संगोष्ठी

"सामाजिक परिप्रेक्ष्य में परमाणु ऊर्जा का बहुआयामी कार्यक्रम"

04 - 05 मार्च 2011 (शुक्रवार एवं शनिवार)

तकनीकी सत्र

दिनांक :- 05-03-2011 (शनिवार)

प्रथम वार्ता सत्र :- 09.30 - 11.00

| क्र. स. | वार्ता विषय | वार्ताकार | समय |
|---|---|---|---|
| 1. | परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम एवं विकिरण संरक्षण | डॉ. डी. एन. शर्मा | 09.30 - 10.00 |
| 2. | रेडियों समस्थानिकों का चिकित्सकीय उपयोग | श्री. बी.पी. तिवारी | 10.00 - 10.30 |
| 3. | अपशिष्ट प्रबंधन | श्री कंवर राज | 10.30 - 11.00 |

चाय : 11.15 - 13.15

द्वितीय वार्ता सत्र :- 11.15 - 13.15

| क्र. स. | वार्ता विषय | वार्ताकार | समय |
|---|---|---|---|
| 1. | पर्यावरण मूल्यांकन एवं संरक्षण | डॉ. (श्रीमती) जी.जी. पंडित | 11.15 - 11.45 |
| 2. | पशुओं के स्वास्थ्य और रोग के विभिन्न मानकों के आकलन में रेडियो समस्थानिक यकनीकी की अनुकूलता | डॉ. ए.के. कटारिया | 11.45 - 12.15 |
| 3. | नाभिकीय विकिरण द्वारा कैंसर का उपचार | डॉ. हेमंत दाधीच | 12.15 - 12.45 |
| 4. | भारी पानी बोर्ड की गतिविधियां | श्री. बी. पी. दुबे | 12.45 - 13.15 |

भोजन : 13.15 - 14.00

परिचर्चा एवं समापन समारोह :- 14.00 - 15.00

चायपान

# स्मारिका

## अनुक्रमणिका


| क्रम सं. | विषय | पृष्ठ संख्या |
|---|---|---|
| 1 | संदेश- **डॉ. अनिल काकोडकर** | |
| 2 | संदेश- **श्री. सत्यव्रत चतुर्वेदी** | |
| 3 | संदेश- **डॉ. श्रीकुमार बॅनर्जी** | |
| 4 | संदेश- **प्रो. ए.के. गहलोत** | |
| 5 | संदेश- **डॉ. रतन कुमार सिन्हा** | |
| 6 | संदेश- **प्रो. एस.बी.एस. यादव** | |
| 7 | संदेश- **डॉ. के.बी. सैनिस** | |
| 8 | संदेश- **श्री. बी.बी. महान्ति** | |
| 9 | **संगोष्ठी परिचय** - जयप्रकाश त्रिपाठी | |
| 10 | **हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद्**<br>**-वैज्ञानिक जागरूकता व चिंतन की प्रतिनिधि संस्था**<br>-जयप्रकाश त्रिपाठी | 1 |
| 11 | **रेडियो समस्थानिकों का चिकित्सकीय उपयोग**<br>- बी.पी. तिवारी | 9 |
| 12 | **भारत में रेडियोसक्रिय अपशिष्ट प्रबंन्धन**<br>- कंवर राज | 13 |
| 13 | **नाभिकीय प्रौद्योगिकी का कृषि के क्षेत्र में उपयोग**<br>- डॉ. एस.एफ. डिसुजा | 28 |
| 14 | **परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम एवं विकिरण संरक्षा**<br>- डॉ. डी.एन. शर्मा | 37 |
| 15 | **पर्यावरण मूल्यांकन एवं संरक्षण**<br>- डॉ. (श्रीमती) जी.जी. पंडित | 41 |
| 16 | **भारत की ऊर्जा आत्मनिर्भरता में नाभिकीय ऊर्जा की भूमिका**<br>- स्वप्नेश कुमार मल्होत्रा | 46 |

# स्मारिका

## अनुक्रमणिका


| क्रम सं. | विषय | पृष्ठ संख्या |
|---|---|---|
| 17 | **रेडियो आइसोटोप तकनीक का पशु पोषण अध्ययन में उपयोग** - त्रिभुवन शर्मा | 52 |
| 18 | **सामाजिक समृद्धि में विकिरण प्रौद्योगिकी का अनुप्रयोग** - डॉ. अनिल कुमार कोहली | 54 |
| 19 | **खाद्य पदार्थों एवं तत्संबंधी उत्पादों का विकिरण द्वारा प्रसंस्कारण** - डॉ. अरुण कुमार शर्मा | 58 |
| 20 | **परमाणु चिकित्सकीय तकनीकों का पशु चिकित्सा में उपयोग: वर्तमान एवं भविष्य की संभावनाएं** - प्रो. ए.के.गहलोत | 64 |
| 21 | **परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम का पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान के क्षेत्र में योगदान** - डॉ. एस. बी. एस. यादव | 65 |
| 22 | **परमाणु विकरणों द्वारा कैंसर का निदान एवं उपचार** - डॉ. हेमन्त दाधीच | 66 |
| 23 | **नाभिकीय ऊर्जा प्रेरित कृषि व औद्योगिक कार्यक्रमों की विवेचना** - विनय कुमार श्रीवास्तव | 68 |
| 24 | **पशुओं के स्वास्थ्य और रोग के विभिन्न मानकों के आकलन में रेडियो आइसोटोप तकनीक की अनुकूलता** - ए. के. कटारिया और नलिनी कटारिया | 74 |

# राजस्थान पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, बीकानेर

" विजय भवन" के ऐतिहासिक परिसर में अवस्थित, उदीयमान राजस्थान पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय बीकानेर की स्थापना 13 मई 2010 को हुयी । तथा प्रो. अजय कुमार गहलोत इसके प्रथम कुलपति के रूप में मनोनीत किये गये। अपने गठन के शैशव काल में ही यह विश्वविद्यालय प्रोफेसर गहलोत के कुशल नेतृत्व एवं मार्गदर्शन में नित नयी ऊचाइयों को छूने के लिए तत्पर है। इस विश्वविद्यालय का प्रमुख उद्देश्य पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान से संबंधित विविध विषयों में उच्च शिक्षा प्रदान करना तथा इस क्षेत्र में कार्य करने हेतु उत्कृष्ट व विशिष्ट मानवसंसाधन विकसित करना है। पशु विज्ञान एवं प्रौद्योगिक के क्षेत्र में प्रांतीय, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कार्यरत शैक्षणिक व अनुसंधान संस्थानों से सामंजस्य स्थापित कर पशु चिकित्सा, मत्स्य एवं डेअरी उद्योग के विषय में नवीनतम जानकारी प्राप्त कर इस क्षेत्र को व्यापक एवं विस्तृत बनना इस विश्वविद्यालय का अहम् दायित्व है।

पशुधन के संरक्षण एवं संवर्धन के प्रति प्रतिबद्ध इस विश्वविद्यालय के अन्तर्गत राजस्थान के कई शैक्षणिक एवं शोध संस्थान कार्यरत है। इससे संबद्ध पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर सन 1954 से अनवरत पशुविज्ञान से संबंधित शिक्षा एवं अनुसंधान के क्षेत्र में अपनी उत्कृष्टता का परचम लहराने में सफल रहा हैं। इसके अतिरिक्त उदयपुर व जोधपुर में स्थित पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान महाविद्यालय तथा कई अन्य शैक्षणिक एवं शोध संस्थान इस विश्व विद्यालय के दिशा निर्देशों के अनुसार इस क्षेत्र में अपना योगदान दे रहे हैं।

• इस विश्वविद्यालय के अधीन पशु स्वास्थ्य, पशु-पोषण, नरूल सुधार व संवर्धन से संबंधित कई परियोजनायें एवं कार्यक्रम राजस्थान तथा देश के अन्य भागों में सुचारू रूप से संचालित व कार्यान्वित की जा रही है।

• इस विश्वविद्यालय से उत्तीर्ण हुए छात्र/छात्राओं का चयन प्रमुख राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय संस्थानों द्वारा किया जाता है तथा देश के आर्थिक विकास में ये युवा मानव शक्ति अहम योगदान प्रदान कर रही है। राष्ट्रीय विकास तथा सामाजिक उत्थान हेतु इस विश्वविद्यालय द्वारा किये जा रहे कुछ और कार्य निम्नक्त है।

• गावों में भेड़ों, बकरियों आदि की उच्च व नयी नस्लों का मुफ्त वितरण।
• बैलों के नये नस्लों का उत्पादन एवं मुफ्त वितरण
• पालतू पशुओं व जानवरों (विशेष रूप से कुत्तों) के बारे में जागरूकता पैदा करने के उद्देशय से हर वर्ष प्रदशनी आयोजित करना।
• जानवरों व पशुओं के उचित पोषण तथा मृत्युदर को घटाने के विविध उपायों को कार्यान्वित करना
• पशु-पालन, स्वास्थ्य एवं पोषण से संबंधित प्रशिक्षण प्रदान करना।

# संगोष्ठी परिचय

किसी भी राष्ट्र के आर्थिक एवं सामाजिक उन्मेष में वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिकीय प्रगति की भूमिका निहायत महत्वपूर्ण व निर्णायक होती है। मानव जीवन को उन्नत बनाना ही वैज्ञानिक अनुसंधानों तथा विकास कार्यों का मूल उद्देश्य होता है। देश में परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम की संकल्पना भी इसी बुनियाद पर आधारित है। भारत का परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम जिसकी नींव पचास के दशक में डाली गयी थी, उतरोत्तर व्यापक, परिपक्व एवं आत्मनिर्भर बनने की दिशा में द्रुतगति से अग्रसर है। हमारे परमाणु ऊर्जा कार्यक्रमों ने जनजीवन के विकास की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए नाभिकीय ऊर्जा उत्पादन के साथ-साथ जनहित में विकिरण प्रौद्योगिकी के अनुप्रयोग के कई नये आयाम प्रस्तुत किये हैं।

परमाणु ऊर्जा की बहुआयामी क्षमताओं को अर्जित करने हेतु देश में परिष्कृत नाभिकीय प्रौद्योगिकी के विभिन्न क्षेत्रों में अनुसंधान एवं विकास का कार्य सतत् जारी है। ऊर्जा उत्पादन के साथ-साथ भारतीय परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम के तहत संचालित अनुसंधान एवं विकास कार्यों ने खाद्य एवं कृषि,मानव स्वास्थ्य, जन्तु स्वास्थ्य, जल शुद्धिकरण, अपशिष्ट प्रबंधन तथा पर्यावरण संरक्षण जैसे जनोपयोगी क्षेत्रों में अहम् योगदान दिया है। इन क्षेत्रों में भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र में निष्पन्न कार्यों के फलस्वरुप फसलों की नयी किस्मों का विकास, खाद्य प्रसंस्करण एवं परिरक्षण, चिकित्सकीय उपकरणों का निर्जमीकरण, उत्परिवर्तन प्रजनन,स्वास्थ्य समृद्धि तथा औद्योगिक विकास हेतु आयनकारी विकिरण का उपयोग जन जीवन को स्वस्थ, समृध्द एवं उन्नत बनाने में महत्वपूर्ण उपादेय साबित हुआ है।

परमाणु ऊर्जा विभाग की अनुसंधान एवं विकास क्षमता से प्राप्त सामाजिक लाभ के प्रत्यक्ष उपयोगों की एक लम्बी सूची है। फिर भी सामान्य तौर पर समाज में परमाणु ऊर्जा एवं विकिरण के प्रति कई भ्रांतियाँ व्याप्त है। निश्चित रूप से विकिरण से सावधान रहने की आवश्यकता है। लेकिन अधिकांश भय व भ्रांतियाँ सही जानकारी के अभाव के कारण है।

समाज में व्याप्त भ्राँतियों के निराकरण तथा सामाजिक समृद्ध में परमाणु ऊर्जा की भूमिका को रेखांकित करने के उद्देश्य से "सामाजिक परिप्रेक्ष्य में परमाणु ऊर्जा का बहुआयामी कार्यक्रम" विषय पर आयोजित इस संगोष्ठी में लब्ध प्रतिष्ठित वैज्ञानिकों/इंजिनियरों तथा विद्वानों द्वारा परमाणु ऊर्जा के समग्र पहलुओं पर सार्थक व चिंतनपूर्ण विचार प्रस्तुत किये जायेगें। आशा है कि देश के वैज्ञानिक, प्रौद्योगिकविद्, शिक्षाविद्, चिकित्सक, छात्र एवं समाज के सभी वर्गों के लोग इस संगोष्ठी में सहभागिता दर्ज कर अपने विचारों, शोधों एवं कार्यों से जनसामान्य को अवगत करायेंगे तथा यह संगोष्ठी सामाजिक परिप्रेक्ष्य में परमाणु ऊर्जा की उपादेयता का सही प्रतिदर्श बनाने में सफल होगी।

इसी हार्दिक अभिलाषा के साथ।

जयप्रकाश त्रिपाठी
सचिव एवं संयोजक,
हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद

# हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद् -
# वैज्ञानिक जागरूकता व चिंतन की प्रतिनिधि संस्था

मुम्बई स्थित भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र वैज्ञानिक संस्कृति का प्रमुख संगम स्थल है। जहाँ विज्ञान की लगभग हर विधा में शोध, अध्ययन चिन्तन एवं विकास कार्य सतत् जारी है। परमाणु ऊर्जा के शांतिमय उपयोग के लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए नाभिकीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के अनुसंधान एवं विकास संबंधी गतिविधियों में लीन यहाँ के वैज्ञानिकों एवं इंजिनियरों ने केन्द्र की स्थापना के समय से ही यह महसूस किया कि वैज्ञानिक तथ्यों एवं आविष्कारों से जनसाधारण को परिचित कराकर ही देश एवं समाज के स्तर को उन्नत बनाया जा सकता है और इसके लिए जनसामान्य द्वारा बोली एवं समझी जानेवाली भाषा हिन्दी एक उचित माध्यम है। इसी सोच की परिणति के रूप में आज से लगभग 4 दशक पूर्व "**हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद**" का गठन हुआ।

हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद का उद्देश्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की प्रगति के साथ-साथ राष्ट्र व समाज के समुचित विकास के लिए वैज्ञानिक उपलब्धियों एवं गतिविधियों का प्रचार-प्रसार करना तथा वैज्ञानिक चिन्तन एवं जागरूकता हेतु एक मंच तैयार करना है । यह उल्लेख करते हुए मुझे अपार हर्ष का अनुभव हो रहा है कि परिषद् ने इन चार दशकों में विज्ञान भावना के कई नये आयाम स्थापित किये हैं । संस्था द्वारा निष्पन्न कार्यों एवं गतिविधियों का संक्षिप्त विवरण निम्नवत है।

### त्रैमासिक पत्रिका "वैज्ञानिक " का प्रकाशन

"वैज्ञानिक" का विगत 42 वर्षों से अनवरत प्रकाशन परिषद् की सबसे महत्वपूर्ण और बड़ी उपलब्धि रही है। 'वैज्ञानिक' के संपादन एवं व्यवस्थापन से जुड़े केन्द्र के वैज्ञानिकों ने अपने मूल वैज्ञानिक दायित्वों का निर्वहन करते हुए राजभाषा हिन्दी के प्रति प्रतिवद्धता, प्रेम एवं समर्पण के कारण "वैज्ञानिक" पत्रिका के संपादन व लेखन कार्य करते रहे जो अपने आप में एक मिसाल तथा श्लाधनीय प्रयास है।

आज "वैज्ञानिक" पत्रिका राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान बना चुकी है । इस पत्रिका की लोकप्रियता का आलम यह है कि देशभर के वैज्ञानिकों के लेख इसमें निरंतर प्रकाशित होते रहते हैं और देश के लगभग सभी वैज्ञानिक व शैक्षणिक संस्थानों में इसकी प्रति प्रेषित की जाती है।

### राजभाषा वार्ताओं का आयोजनः

परिषद् शुरू से ही हिन्दी में वैज्ञानिक व अन्य लोकप्रिय विषयों पर विशेषज्ञों व विद्वतजनों द्वारा वार्ताओं का आयोजन करती रही है। ये वार्तायें परिषद् के सदस्यों जो विज्ञान की विभिन्न विधाओं में विशेष योग्यता रखते है तथा अन्य विद्धानों व विशेषज्ञों द्वारा दी जाती है। यथा समय अन्य संस्थानों के वक्ताओं व विशिष्ट जनों ने भी परिषद के मंच को तथा बाहर से आनेवाले वक्ताओं ने भी परिषद् के मंच को सुशोभित किया है। प्रसिद्ध राष्ट्रीय कवि श्री रामधारी दिनकर सिंह ने परिषद् को शुरू में अत्यन्त प्रोत्साहन दिया जो संस्था के शैशव काल में अमोल साबित हुआ। जिन अन्य गणमान्य व्यक्तियों ने वार्ताएँ दी हैं, उनमें माननीय श्री लालकृष्ण आडवानी (1986) परिषद् द्वारा आयोजित प्रथम वैज्ञानिक संगोष्ठी "जनहित में विज्ञान" के अवसर पर, डॉ० नंदलाल सिंह व डॉ० सत्य प्रकाश (1969) "विज्ञान साहित्य तथा भाषा" श्री सुरेन्द्र झा संपादक साइंस टूडे (1973)'आज के संदर्भ में हिन्दी सेवी संस्थाओं की उपादेयता 'श्री प्रदीप श्रीवास्तव (1990) कुलपति, इन्दौर विश्व विद्यालय, प्रो० सूरजभान सिंह (1986)

अध्यक्ष शब्दावली आयोग दिल्ली, श्री गणेश मंत्री (1986) प्रसिद्ध पत्रकार, डॉ० राही मासूम रज़ा (1986) प्रसिद्ध पटकथा लेखक, डॉ० राम गोपाल (1998) निदेशक रक्षा अनुसंधान प्रयोगशाला, जोधपुर, श्री. विजय तेंदुलकर (1986) प्रसिद्ध मराठी नाटककार, पो० जयन्त नार्लीकर, श्री. शरद जोशी, डॉ० चंद प्रकाश द्विवेदी जनाब जावेद अख्तर आदि नामों का उल्लेख करना परिषद् की गरिमा का परिचायक है।

**वैज्ञानिक व तकनीकी शब्दावली निर्माण :**

वैज्ञानिक हिन्दी शब्दावली का अभाव परिषद् के सदस्यों को शुरू ही से महसूस होता रहा है। प्रगत वैज्ञानिक विषयों पर हिन्दी लेखन में यह कठिनाई और भी अधिक महसूस होती थी। इसका एक मात्र उपाय स्वयं नये शब्दों का निर्माण था। अत: कुछ विद्वानों ने उन पर कार्य किया और 'नाभिकीय भौतिकी व अभियांत्रिकी, 'घनावस्था विज्ञान' 'वर्णक्रमदर्शिका', 'अंतरिक्ष निर्माण' 'रेडियो रसायनिकी', 'जीव विज्ञान, 'अपशिष्ट प्रबंधन', 'रासायनिक अभियांत्रिकी, 'ईंधन पुनर्संसाधन', संबंधित शब्द संग्रह तैयार किया । गृह मंत्रालय के अधीन नवगठित वैज्ञानिक व तकनीकी शब्दावली आयोग दिल्ली से प्रयत्न करके इन संग्रहों को मानक रूप प्रदान किया गया है ।

**वैज्ञानिक संगोष्ठियाँ :**

जनमानस तक हिन्दी के माध्यम से गूढ़ वैज्ञानिक विषयों को पहुँचाने और वैज्ञानिक साहित्य के निर्माण के उद्देश्य से वैज्ञानिक संगोष्ठियाँ आयोजित की जाती रही हैं। आयोजन संबंधी परिश्रम के अलावा वैज्ञानिक संगोष्ठियों के लिये विषय व वार्ताकारों का के लिए ये संगोष्ठियाँ नवीनता और उत्साह का माध्यम रहीं हैं । हिन्दी भाषियों व तकनीकी लोगों के लिए संगोष्ठियाँ एक ऐसी खिड़की रही है जिससे कम समय में विषय विशेषज्ञों से ही सीधे उचित व अन्य जानकारी प्राप्त हो जाती है । यह कहना उचित होगा कि इन वार्ताओं का माध्यम हिन्दी होने के कारण सभी तकनीकी जानकारी सरल व विविध पृष्ठभूमि के बड़े समुदाय को ध्यान में रखकर प्रस्तुत की जाती ह ै ।

हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद् ने अब तक लगभग 100 से अधिक संगोष्ठियों का आयोजन किया है । प्राय: सभी संगोष्ठियों में वैज्ञानिक वार्ताकरों की वार्ताओं को स्मारिका के रूप में उपलब्ध कराया जाता रहा है ।

**अखिल भारतीय होमी भाभा विज्ञान लेख प्रतियोगिता:**

हिन्दी में विज्ञान लेखन को प्रोत्साहित करने के लिए परिषद् प्रति वर्ष अखिल भारतीय **"होमी भाभा विज्ञान लेख प्रतियोगिता का आयोजन करती** है। लेखकों को समुचित प्रोत्साहन एवं सम्मान प्रदान करने के लिए श्रेष्ठ लेखों के लिए प्रथम, द्वितीय, तृतीय एवं इतर हिन्दी भाषी लेखकों को विशेष पुरस्कार व प्रोत्साहन पुरस्कार दिये जाते हैं । इन सभी लेखों को प्रतियोगिता विशेषांक के रूप में "वैज्ञानिक" में प्रकाशित भी किया जाता है।

**छात्रों के लिए हिन्दी विज्ञान प्रश्नमंच**

प्रश्नमंच प्रतियोगिता परिषद् द्वारा आयोजित कार्यक्रमों में अत्यंत लोकप्रिय है। विगत 15 वर्षों से केन्द्र के केन्द्रीय सभागृह में आयोजित वैज्ञानिक प्रश्नमंच प्रतियोगिता के माध्यम से छात्रों को विज्ञान के क्षेत्र में हुए नवीनतम शोध एवं सूचनाओं से अवगत कराया जाता है । अखिल भारतीय परमाणु ऊर्जा अन्तर विद्यालयीन **"हिन्दी विज्ञान प्रश्न मंच"** प्रतियोगिता अत्यंत प्रयोजनपूर्ण एवं सार्थक कार्यक्रम है। इस कार्यक्रम में मुम्बई स्थित परमाणु ऊर्जा केन्द्रीय विद्यालय के लगभग 700 छात्र, छात्रायें व अध्यापक गण भाग लेते है ।

वर्ष 2010 के अंतिम चक्र की प्रतियोगिता 28 मार्च 2011 को भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, मुम्बई में आयोजित की जा रही है ।

**मोनोग्राफ लेखन:**

संदर्भ पुस्तकों का (मोनोग्राफ) लेखन हिन्दी साहित्य में एक सर्वथा नयी विधा है । विज्ञान व तकनीकी विषयों पर हिन्दी में मानोग्राफ लेखन नहीं के बराबर है। अत: मोनोग्राफ लेखन के विकास हेतु हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद् ने मानोग्राफ लेखन एवं प्रकाशन की योजना का सूत्रपात किया है ।

इस योजना के अंतर्गत विज्ञान व तकनीकी के सामयिक रूचि के उपविषयों जो तकनीकी व प्रौद्योगिकीय उपयोगों से संबंधित हैं, पर मोनोग्राफ लेखन का कार्य प्रारंभ किया गया है ।

मोनोग्राफ लेखन के प्रारंभिक प्रयास में परमाणु ऊर्जा से संबंधित विषयों को ही चुना गया है। आशा है कि भविष्य में विज्ञान के अन्य विषयों पर भी मोनोग्राफ लेखन का कार्य प्रारंभ किया जाएगा।

परिषद् द्वारा मोनोग्राफ प्रकाशन श्रृंखला की पहली कृति के रूप में **"पदार्थ अभिलक्षणन की प्रगत विधियाँ"** गत 4-5 मार्च को देहरादून में आयोजित वैज्ञानिक संगोष्ठी के अवसर पर उत्तरांचल के मुख्य मंत्री डॉ. रमेश पोखरियाल द्वारा संपन्न हुआ।

वर्तमान में चिकित्सा में 'आयनीकारक विकिरण:क्यों और कैसे', 'प्लूटोनियम एवं ईंधन पुनर्संसाधन', जरकोनियम, कणक्षेपण आदि विषयों पर लिखे गये मोनोग्राफ व पांडुलिपियों के मूल्यांकन का कार्य प्रगति पर है । इनके भी प्रकाशन की दिशा में परिषद् सतत् प्रयत्नशील है ।

**कार्यशालायें:**

परिषद् ने केन्द्र में कार्यरत हिन्दी अनुभाग के साथ मिलकर विभिन्न कार्यशालाओं के आयोजन में भूमिका निभायी तथा पुरी यन्मयता से अपनी सहमागिता दर्ज की ये कार्यशालायें मुख्यतया अनुवाद, शब्दावली, कम्प्यूटर प्रशिक्षण आदि कार्यों के लिये आयोजित की जाती रही हैं ।

इस प्रकार हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद् ने 1967 से निरंतर विज्ञान एवं राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार में अपनी अहम् भूमिका निभाई है। परिषद् की इन उपलब्धियों का रेखांकन उन सभी समार्पित हिन्दी प्रेमियों व कार्यकार्ताओं के स्मरण को ताजा करने का एक लघु प्रयास है जिन्होंने अपने वैज्ञानिक दायित्व का प्रवीणतापूर्वक निर्वहन करते हुए विज्ञान को जनमानस से जोड़ने का भी बीड़ा उठाया है। परिषद् द्वारा आयोजित कार्यक्रमों की सफलता का सेहरा भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र के विश्रुत वैज्ञानिकों तथा परमाणु ऊर्जा आयोग के अध्यक्ष डॉ. श्री कुमार बॅनजी एवं भाभा परमाणु अनुसंघात के निदेशक डॉ० रतन कुमार सिन्हा तथा निष्ठावान वैज्ञानिकों व सक्षम पदाधिकारियों को जाता है जिन्होंने अपना उचित मार्गदर्शन देकर सदैव परिषद् की सफलता का मार्ग प्रशस्त किया है ।

-**जयप्रकाश त्रिपाठी**
सचिव, हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद्
भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, मुम्बई-85

संपर्क सूत्र :
**जयप्रकाश त्रिपाठी**
वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी
पी० पी०, एफ० आर० डी०,
भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र,
ट्रॉम्बे, मुम्बई-400 085.
टेलीफोन-002-25591171.
jtripath@barc.gov.in

# रेडियो समस्थानिकों का चिकित्सकीय उपयोग

बी.पी. तिवारी

नाभिकीय विज्ञान और तकनीकी ने पूरे विश्व में प्रत्येक सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्र में लम्बे समय से योगदान दिया है। चिकित्सा, कृषि, उद्योग तथा शुध्द अनुसंधान के क्षेत्रों में रेडियो समस्थानिकी के अनेक अनुप्रयोग हुए हैं। रेडियो समस्थानिकी के चिकित्सकीय प्रयोगों के बारे मे संक्षिप्त परिचर्चा इस लेख मे दी जा रही है।

बहुत से रासायनिक तत्वों के अनेक समस्थानिक पाये जाते हैं। किसी तत्व के समस्थानिक के परमाणु में प्रोटान की संख्या वही होती है किंतु न्यूट्रानो की संख्या अलग होने के कारण उनका भार अलग-2 होता है। स्थिर अवस्था में किसी परमाणु में नाभिक के बाहर कक्षों में इलेक्ट्रानीं की संख्या प्रोटान की संख्या (परमाणु संख्या) के बराबर होती है। परमाणु का रासायनिक गुण इलेक्ट्रान की संख्या पर निर्भर करता है। कुल मिला कर 82 स्थिर तत्व और उनके 275 स्थिर (Stable) समस्थानिक पाये जाते हैं। किसी तत्व के और भी समस्थानिक कृत्रिम रुप से बनाये जा सकते हैं जो कि अस्थिर होते है। इन अस्थिर (unstable) समस्थानिक की रेडियो समस्थानिक कहते हैं। कुछ अस्थिर समस्थानिक प्राकृतिक रुप से भी पाये जाते हैं जो कि यूरेनियम व थोरियम के क्षय से बनते हैं। कुल मिलाकर करीब 1800 रेडियो समस्थानिक पाये जाते हैं।

वर्तमान समय तक कुल 200 कृतिक रेडियो समस्थानिकीं का प्रयोग नियमित रुप से किया जा रहा है। इन्हे कई विधियों द्वारा बनाया जाता है। नाभिकीय भट्टी में न्यूट्रान एक्टीवेसन द्वारा रेडियो समस्थानिको का निर्माण बहुत सरल विधि है। इस विधि द्वारा तत्व के नाभिक में न्यूट्रानों की संख्या अधिक कर दी जाती है। कुद्द रेडियो समस्थानिको का निर्माण साइक्लोट्रोन में किया जाता है। इस विधि द्वारा नाभिक मे प्रोटानो की संख्या अधिक कर दी जाती है। रेडियो समस्थानिक का नाभिक स्थिर होने के लिये एल्फा और/या बीटा (या पाजीट्रान) कणों का उत्सर्जन करता है। इन कणों के उत्सर्जन के साथ विद्युत चुम्बकीय विकिरण का उत्सर्जन होता है जिसे गामा किरणो के नाम से जाना जाता है। इस प्रक्रिया की रेडियो सक्रिय क्षय कहते है।

विकिरण उत्सर्जन के गुण के कारण रेडियो समस्थानिकों का प्रयोग स्वास्थ्य देखभाल एवं अन्य क्षेत्रो में किया जा सका है। चिकित्सा के क्षेत्र में रोगो के निदान, उपचार और बीमारियो के प्रबंधन में रेडियो समस्थानिकी का प्रयोग व्यापक रुप से हुआ है। स्वास्थ्य देखभाल में इनके प्रयोगों की विकिरण औषधि और रेडियो थिरेंपी के रुप मे वर्गीकृत किया जा सकता है।

**विकिरण औंषधि (Nuclear Medicine)**

औषधि के क्षेत्र में रेडियो समस्थानिकी के प्रयोग के साथ विकिरण औषधि की शुरुआत हुई। सर्वप्रथम 1930 में वैज्ञानिकों ने थायराईड ग्रथि में रेडियोसक्रिय आयोडिन का आकलन करते के लिये गीग़र काउंटर Geiger Counter) का प्रयोग किया।

विकिरण औषधि चिकित्सा की वह शाखा है जिसमें रेडियो समस्थानिकों का प्रयोग व्यक्ति के विशिष्ठ अंगो के कार्य की जानकारी प्राप्त करने के लिये या अंगों की बीमारियों की ठीक करने के लिये किया जाता है। चिकित्सा के इन जानकारियों की सहायता से बीमारियों की शीघ्रता से सही-सही निदान कर लेते हैं। थायराइड, अस्थि, हृदय, यकृत और बहुत अन्य अँगो का अध्ययन सरलता से किया जा सकता है और इस तरह उनके कार्यो के विकारो को जाना जा सकता हैं।

कुद्द मामलो मे विकिरण का प्रयोग अंगो की बीमारियों के उपचार के लिये किया जा सकता है। पूरे विश्व मे 10,000 से अधिक अस्पतालों में विकिरण औषधि का प्रयोग किया जा रहा है। लगभग 90% विधिंया रोगो के निदान के लिये प्रयोग की जाती है।

रोग निदान मे सबसे अधिक प्रयोग होने वाला समस्थानिक टेक्नीनियम-99 एम ($^{99M}Tc$) है। रोगो के निदान (diagnosis) के लिये विकिरण औषधि की आवृति 9% वार्षिक है और रोगो के उपचार के लिये यह आवृति मात्र दशवॉ भाग है। रोगो के निदान के लिये रेडियो भेषजों का प्रयोग प्रतिवर्ष 10% से अधिक बढ़ रहा है।

**<u>नैदानिक विकिरण औषधि</u> <u>(Diagnostic Nuclear Medicine)</u>**

रोगो के निदान मे रेडियो समस्थानिकों का प्रयोग दो प्रकार से किया जाता है।

i) **<u>रेडियो अमापन विधियॉ (RadioImmunoassay)</u>**

रेडियो समस्थानिकों की सूक्ष्म मात्रा का पता लगाना बहुत ही सरल है। इसलिये इनका प्रयोग जैवकीय नमूनों में अणुओ को चिन्हित करने के लिये किया जा सकता है। रोग वैज्ञानिको ने रक्त, मूत्र, होर्मोन के विभिन्न अवयवों की मात्रा निर्धारण करने के लिये सैकडो परीक्षण विधियों का अविष्कार रेडियो समस्थानिको के प्रयोग से किया है। इन विधियों को रेडियो अमापन कहते हैं। जैव रसायन जटिल है फिर भी प्रयोगशालाओ मे प्रयोग होने वाले किट (Kits) के निर्माण से यह विधि सरल हो गयी है और सही परिणाम देती है।

रेडियो अमापन का सिद्धान्त रेडियो समस्थानिक से लेबेल किये हुए एन्टीजेन और बिनाा लेबेल किये हुए एन्टीजेन की किसी विशिष्ट एन्टीबाडी के साथ काम्पलेक्स बनाने की प्रतियोगिता पर आधारित है। इस अभिक्रिया की व्यवस्था निम्नलिखित ढंग से की जा सकती है।

साधारण एन्टीजेन + विशिष्ट एन्टीबाडी ‹—› एन्टीजेन एन्टीबाडी काम्पलेक्स

रेडियोसक्रिय एन्टीजेन + एन्टीबाडी ‹—› रेडियोसक्रिय एन्टीजेन एन्टीबाडी काम्पलेक्स

समतुल्यता (equilibrium) की अवस्था पर रेडियो सक्रिय क्राम्पलेक्स (B) को क्रिया मे भाग न लिये हुए स्वतंत्र रेडियो सक्रिय एन्टीजेन (F) से अलग कर लिया जाता है और इनकी मात्राओं को रेडिऐशन काउंटर यंत्र द्वारा माप लिया जाता है। इन दोनो का अनुपात (B/F) अभिक्रिया मे उपस्थित साधारण एन्टीजेन पर निर्भर करता है। किसी जैवकीय नमूने से उपस्थित एन्टीजेन की मात्रा का ज्ञान इनदोनों के अनुपात (B/F) की तुलना एक प्रमाणिक अनुपात (B/F) से करके किया जाता हैं। प्रमाणिक अनुपात (B/F) को प्राप्त करने के लिये प्रयोगशाला मे एन्टीबाडी की मात्रा स्थिर रख कर एन्टीजेन की ज्ञात मात्राओं के साथ अलग प्रयोग किये जाते है। इस विधि द्वारा 10-12 मोल्स/लीटर की संवेदनशीलता प्राप्त की जा सकती है। इस विधि द्वारा सरलता से ठीक-ठीक मात्राओं की जानकारी मिलने के कारण इस तकनीकी का प्रयोग रोगों के निदान में व्यापक रुप से किया गया है

ii) **<u>रेडियो समस्थानिक प्रतिबिम्बन विधियॉ (Radionuclide Imaging Procedures)</u>**

इस प्रकार की विधियाँ रोगों के निदान मे बहुत ही लाभ दायक है। इन विधियों मे रेडियोसक्रिय पदार्थो का प्रयोग किया जाता है जिन्हे रेडियोभेषज कहा जाता है। किसी विशिष्ट रेडियोभेषज का प्रयोग परीक्षण के प्रकार पर निर्भर करता है। रेडियो भेषजों को इंजेक्शन द्वारा या मुख द्वारा या स्वांस द्वारा शरीर मे प्रवेश कराया जाता है। शरीर के अन्दर रेडियोभेषज किसी अंग विशेष मे इकट्ठा हो जाता है और ऊर्जा को गामा किरणो के रुप में उत्सर्जित करता है। इन गामा किरणों को एक यंत्र द्वारा मालूम किया जाता है। मुख्य रुप से प्रयोग मे लाया जाने वाला यंत्र गामा कैमरा है। गामा कैमरा एक कम्प्यूटर के साथ कार्य करता है और शरीर मे शोषित रेडियोट्रेसर के वितरण का मापन करता है। इस यंत्र के द्वारा एक विशेष प्रकार की इमेज बनायी जाती है जिसे विकिरण औषधि इमेज कहते है। इसके द्वारा हमें विशिष्ट अंग की रचना के साथ-2 उसके कार्यो की विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है।

पाजीट्रान इमिशन टीमोग्राफी PET एक ऐसी तकनीक है जिसमे पाजीट्रान उत्सर्जित करने वाले समस्थानिको का प्रयोग होता है। यह विधि अधिक

प्रीसाइज (Precise) और सोफिस्टीकेटेड (sophisticated) है। पाजीट्रान उत्सर्जित करने वाले समस्थानिक को प्राय: इंजेक्शन द्वारा शरीर में प्रवेश कराया जाता है। यह विशिष्ट अंग मे वितरित हो जाता है। उत्सर्जित पाजीट्रान शरीर मे इलेक्ट्रान से अंत:क्रिया के बाद विपरीत दिशा मे 511 Kev ऊर्जा की दो गामा किरणे उत्सर्जित करता है। ये गामा किरणें PET कैमरा द्वारा पता लगायी जाती हैं और इस प्रकार इनके उत्पन्न होने की जगह का ठीक-ठीक ज्ञान प्राप्त होता है। फ्लोरीन-18 रेडियो समस्थानिक द्वारा पाजीट्रान इमिशन टोमाग्राफी ने कैंसर विज्ञान के क्षेत्र में सबसे बडी भूमिका निभायी है क्यों की लगभग सभी प्रकार के कैंसरो का ठीक-2 पता लगाने और उनके मूल्यांकन मे यह तकनीक अति उत्तम है। इस तकनीकी का प्रयोग हृदययिवज्ञान और मस्तिष्क विज्ञान मे भी किया गया है।

पाजीट्रान टोमोग्राफी इमेज को कम्प्यूटराइज टोमाग्राफी (CT) मेग्नेटिक रेजोनेन्स इमेज (MRI) के साथ सुपरइम्पोज करके एक विशिष इमेज प्राप्त की जा सकती है जिसे इमेज फ्यूजन या कोरजिस्ट्रेशन कहा जाता है। इस प्रक्रिया से दो प्रकार के परीक्षणों का परिणाम एक साथ मालूम होता है। जिससे रोगो का मूल्यांकन विल्कुल ठीक से हो जाता है।

वर्तमान समय से सिंगल फोटान इमिशिन टोमोग्राफी/कम्प्यूटेड टीमोग्राफी (SPECT/CT) पाजीट्रान इमिशन टीमोग्राफी/कम्प्यूटेड टीमोग्राफी (SET/CT) को एक ही मशीन के साथ निर्मित किया जा रहा है जिससे दोनो प्रकार के अध्ययन एक साथ करना संभव ही गया है। इस अविष्कार से रोगों के निदान मे अकेले गामा कैमरा की तुलना मे लगभग 30% अधिक और विल्कुल ठीक जानकारी प्राप्त होना संभव हो गया है। यह एक शक्तिशाली और महत्वपूर्ण तकनीक है जो कि हमे विभिन्न प्रकार की बीमारियों के बारे में विशिष्ट ज्ञान प्रदान कराती है।

विकिरण औषधि इमेजिंग और अन्य प्रकार की इमेजिंग विधियों जैसे एक्सरे विधि के बीच मूलभूत अन्तर यह है कि इस विधि मे विकिरण श्रोत को शरीर के अन्दर प्रवेश कराने के बाद अध्ययन किया जाता है। गामा किरणों की जानकारी किसी भी यंत्र द्वारा मालूम करके रेडियो समस्थानिक की स्थिति और उसकी सान्द्रता का पता लगा लिया जाता है। किसी विशिष्ट अंग द्वारा शोषित रेडियो समस्थानिक की कम या अधिक मात्रा का अध्ययन करके और समय के साथ उसके परिवर्तन का अध्ययन करके उस अंग के कार्य और रचना का ठीक-2 पता लगाया जाता है।

दूसरी इमेजिंग विधियों की तुलना मे विकिरण औषधि इमेजिंग सुस्पष्ट रुप से अधिक लाभदायक है क्योकि इस विधि द्वारा किसी विशिष्ट अंग में उपस्थित विकारों की जानकारी बहुत पहले हो जाती है जब की अन्य विधियाँ उस समय विशिष्ट अंग को स्वस्थ वताती है। इसलिये विकिरण औषधि इमेजिंग का प्रयोग तेजी से बढ़ रहा है।

विकिरण औषधि के नैदानिक प्रयोग से औसत रुप से 4.6 मिली सीवर्ट (mSv) प्रभावकारी विकिरण डोज हर एक परीक्षण से रोगी को प्राप्त होती है।

**<u>नैदानिक रेडियो भेषज</u>** (Diagnostic Radiopharma ceuticals

बिना रेडियो भेषज का प्रयोग किये हुए कोई भी रेडियो समस्थानिक इमेजिंग (Nuclear Medicine Imaging) संभव नही है। इसलिये इनका अध्ययन महत्वपूर्ण है।

रासायनिक दृष्टि से हमारे शरीर के प्रत्येक अंग अलग-ढंग से कार्य करते हैं। बहुत से रसायनों (Chemicals) का पता लगाया है जो कि विशिष्ट अंगो द्वारा शोषित किये जाते है। उदाहरण के लिये जैसे थायराइड ग्रंथि आयोडीन शोषित करती है और मष्तिष्क द्वारा ग्लकोज लिया जाता है। रेडियो भेषज वैज्ञानिकी ने रेडियो समस्थानिक और जैवकीय रुप से सक्रिय (Biologically active) पदार्थों के संयोग से अनेक रेडियो भेषज बनाये है। साधारण तया एक रेडियो भेषज जब शरीर में प्रवेश करता है तो जैवकीय प्रक्रिया में भाग लेता है और रासायनिक गुण के आधार पर विशिष्ट अंग में जाता है और जैवकीय

विधियो से उत्सर्जित हो जाता है।

रेडियो भेषज की एक निश्चित मात्रा ही रोगी को दी जाती है। यह मात्रा परीक्षण से प्राप्त होने वाली आवश्यक जानकारी के लिये पर्याप्त होनी चाहिये। प्रयुक्त रेडियोभेषज मे उपस्थित रेडियो समस्थानिक पर्याप्त ऊर्जा की गामा किरणे उत्सर्जित करना चाहिये जिससे वे शरीर के बाहर निकल सकें और गामा कैमरा या अन्य यंत्रो से मापी जा सकें। रेडियो समस्थानिक की अर्ध आयु (Half Life) जिससे परीक्षण होने के उपरान्त शीघ्र ही क्षय द्वारा समाप्त ही सके। इससे मरीज को विकिरण डोज कम मिलती हैं।

नैदानिक विकिरण औषधि मे सबसे व्यापक रुप से प्रयोग होने वाला रेडियो समस्थानिक टेक्नीशियम-99 एम ($^{99M}$Tc) और 80% नैदानिक विधियों मे प्रयुक्त होता है। यह कृत्रिम रुप से बनाये गये तत्व टेक्नीशियम (TC) का एक समस्थानिक है। इस समस्थानिक मे विकिरण औषधि नैदानिक परीक्षण पूर्ण करने के आदर्श गुण विद्यमान है। ये गुण निम्नलिखित है।

• इस समस्थानिक की अर्ध आयु 6 घंटे होती है जो कि परीक्षण के लिये पर्याप्त होती है और रेडिएशन डोज कम मिलती है।

• टेक्नीशियम-99 एम का क्षय ' आइसोमेरिक ' विधि द्वारा होता है और केवल गामा किरण और बिल्कुल कम उर्जा का इलेक्ट्रान उत्सर्जित करता है।

• उत्सर्जित गामा किरण कम उर्जा की होती है और शरीर के बाहर निकल जाती है जो गामा कैमरा द्वारा ठीक- 2 देखी जा सकती है।

• टेक्नीशियम के रासायनिक गुण परिवर्तन शील होने के कारण यह अनेक प्रकार के जैवकीय क्रियाशील पदार्थो से संयोग करके बहुत सारे रेडियो भेषज के बनाने में प्रयुक्त होता है।

टेक्नीशियम-99m आसानी से प्राप्त भी किया जा सकता है। इसके जनरेटर नाभिकीय भट्ठी से प्राप्त किये जाते है। इस जनरेटर मे मालीब्जनम-99 (अर्ध आयु-66 घंटे) होता है। मालीब्जनम-99 का क्षय होकर टेक्नीशियम-99m बनता है जिसे साधारण नमक के पानी (Normal saline) में घुलाकर निकाला जा सकता है।

पर्जिट्रान इमिशन टोमोग्राफी के लिये मुख्य रेडियोभेषज फ्लूरो डी आक्सी ग्लूकोज है (18F-FDG) है। इसमे प्रयुक्त रेडियो समस्थानिक फ्लोरीन-18 (18F) है। इसकी अर्ध आयु 109 मिनिट है। एफ डी जी शरीर की कोशिका मे आसानी से प्रवेश करता है और इसका विखंडन नही होता है जिसके कारण इसके द्वारा कोशिका उपायचय का अध्ययन सभव है।

रेडियो भेषज वैज्ञानिकों ने बड़ी संख्या में रेडियो भेषजों का विकास किया है। नैदानिक विधियो मे प्रयोग किये जाने वाले महत्वपूर्ण रेडियो समस्थानिक लिखित है। रेडियो समस्थानिको की अर्ध आयु कोष्टक मे दिखायी गयी है।

• कार्बन-11(20 मिनट), नाइट्रोज-13 (10 मिनट), ऑक्सीजन-15(2 मिनट), क्लोरीन-18(109 मिनिट),-ये रेडियो समस्थानिक हमारी शरीर के कार्य प्रणाली के मुख्य भाग है और पाजीट्रान उत्सर्जित करते है। पाजीट्रान इमिशन टोमोंग्राफी मे इनके रेडियो भेषजो का प्रयोग करके मस्तिष्क को बीमोरियों तथा हृदय की बीमारियो और कर्करोग का अध्ययन किया जाता है। 118 एफ-फ्लूरो डी आक्सी ग्लूकोज का कर्करोग अध्ययन में बड़ा महत्व है।

• गैलियम-67(78 घंटे)-साफ्ट टिसू टयूमर एवं इनफ्लेमेशन के अध्ययन के लिये

• इंडियम-111(2.8 दिन)-मोनोक्लीनल एंटीवाडी हृदय पेशी के अध्ययन के लिये

• इंडियम-111(2.8 days)-श्वेत रक्त कण संक्रमण के अध्ययन के लिये

• आयोडीन-123(13 घंटा)-सोडियम आयोडाइड -थायराइड ग्रंथि के अध्ययन के लिये

• आयोडीन-125(60 दिन)-हयूमन सीरम अल्वूमिन (RISA)- प्लास्मा आयतन निर्धारण के लिये

• आयोडीन-125(60 दिन)-सोडियम आयोडाइड-रेडियो अमापन के लिये

• आयोडीन-131(8 दिन)-सोडियम आयोडाइड-

थायराइड ग्रंथि व थायराइड कैसर के अध्ययन और उपचार के लिये

• आयोडीन-131(8 दिन)-मेटा आयोडो वेन्जील ग्वानीडीन (MIBG) न्यूरोइंडोक्राइन ग्रथियो के कैंसर के अध्ययन एवं उपचार के लिये

• क्रिप्टान 81m (13 सेकंड)-(रूविडियम Rb-81 (4.6 घंटे) जनरेटर से प्राप्त)- फेफडो के अध्ययन के लिये

• रूविडियम 82 (1.26 मिनिट)(स्ट्राशियम-82 (25 दिन)/ रूविडियम 82 जनरेटर से प्राप्त - फेफडो के अध्ययन के लिये

• टेक्नीशियम 99m (6 घंटा)थायराइड ग्रंथि, लार ग्रंथि, आमाशय की बीमारी एवं पैराथायराइड के अध्ययन के लिये

• टेक्नीशियम 99m (6 घंटा)इथिलीन सिस्टीन डाइजर (ECD) -मस्तिष्क मे रक्त परिसंचरण के अध्ययन के लिये

• टेक्नीशियम 99m (6 घंटा)हेक्सामेटाजाइम (HMPAO)-मस्तिष्क के अध्ययन के लिये

• टेक्नीशियम 99m (6 घंटे)मैको एग्रीगेट एल्ब्यूमिल (MAA)-फेफडो मे रक्त संचार के अध्ययन के लिये

• टेक्नीशियम 99m (6 घंटे)मेब्रीफेनिन - यकृत व पित्ताशय के अध्ययन के लिये

• टेक्नीशियम 99m (6 घंटे)मेड्रोनेट (MDP)-अस्थियों के अध्ययन के लिये

• टेक्नीशियम 99m (6 घंटे)पेन्टेडेट (DTPA)-गुर्दो के कार्य के अध्ययन के लिये

• टेक्नीशियम 99m (6 घंटे)लाल रक्त कण-हृदय कार्य व ऑत मे रक्तश्राव के अध्ययन के लिये

• टेक्नीशियम 99m (6 घंटे)सेस्टागिवी (MIBI)-हृदय पेशियों मे रक्त संचार व स्तन के कैंसर के अध्ययन के लिये

• टेक्नीशियम 99m (6 घंटे)सक्सीमर (DMSA)-गुर्दे के अध्ययन के लिये

• टेक्नीशियम 99m (6 घंटे)सल्फर कोलाइड (SC)-यकृत व स्प्लीन के अध्ययन के लिये

• टेक्नीशियम 99m (6 घंटे)टेट्रोफास्मीन-हृदय पेशी रक्त संचार के अध्ययन के लिये

• थौलियम 201 (73 घंटे)हृदय पेशी के रक्त संचार के अध्ययन हेतु

• जीनान 133 (5 दिन)फेफड़ो में वायु प्रवाह के अध्ययन के लिये

विकिरण औषधि इमेजिंग (imaging) तकनीकी अहानिकारक होने के कारण चिकित्सा मे व्यापक रुप से प्रयोग मे लायी जा रही हैं। कुछ मुख्य अध्ययन अघोलिखित है। इस विधि द्वारा

• गुर्दो के कार्य व उनकी रचना का अध्ययन किया जात है।

• हृदय मे रक्त प्रवाह, हृदय के कार्य व हृदय पेशियों मे रक्त संचार व उनके कार्य का अध्ययन किया जाता है।

• फेफड़ो मे रक्त प्रवाह, वायुकोष्ठो मे वायु का प्रवाह व फेफड़ो के कार्य बारे मे अध्ययन किया जाता है।

• पित्ताशय के कार्य व किसी प्रकार के विकार का पता लगाया जाता है।

• अस्थियों में फ्रैक्चर, संक्रमण, गठिया तथा ट्यूमर व अन्य अंगो के कैंसर का पता लगाया जाता है।

• किसी अंग के कैंसर एवं उसके अन्य अंगो मे फैलाव की जानकारी की जाती है।

• ऑतो मे रक्तश्राव की जानकारी की जाती है।

• शरीर में संक्रमण की उपस्थिति और उसके निश्चित स्थान का पता लगाया जाता है।

• थायराइड ग्रंथि की रचना तथा उसकी अतिसक्रियता या कम सक्रियता का अध्ययन किया जाता है।

• मस्तिष्क की बीमारियों एवं मस्तिष्क मे रक्त परिसंचरण का अध्ययन किया जाता है।

• कुद्द विशिष्ट कैंसरों के मामलों में लिंफ नोड का अध्ययन किया जाता है जैसे-स्तन कैंसर व मीलेनोमा

• इसोफेगस, आमाशय तथा ऑत के कार्यो में अनियमित्रत्राओं का अध्ययन किया जाता है।

• अश्रु नलिकाओ के विकारो और हृदय व मष्तिष्क

के कक्षो मे रक्त प्रवाह विकारो का अध्ययन किया जाता है।

**उपचारदायक विकिरण औषधि (Therapeutic Nuclear Medicine)**

कुछ रेडियो समस्थानिकों को विशिष्ट गुण के कारण कोशिका या अंग विशेष की बीमारी को विकिरण द्वारा ठीक करने के लिये प्रयोग मे लाया जाता है। इस विधि मे रेडियो भेषज को इंजेक्शन या मुख द्वारा शरीर मे प्रवेश कराया जाता है और विशिष्ट अंग या भाग में इकट्ठा हो जाता है। यहॉ पर रेडियो समस्थानिक द्वारा उत्सर्जित विकिरण की बीमारी का उपचार (जैसे थायराइड कैंसर), पैलिएटिब उपचार (जैसे अस्थियों मे उपस्थित कैंसर द्वारा होने वाली पीड़ा) या किसी अंग के कार्य को कम करने (जैसे अतिसक्रिय थायराइड) के लिये किया जाता है। उपचार के लिये प्रयोग मे आने वाले अधिकांश रेडियो समस्थानिक बीटा (B) कणों का उत्सर्जन करते है। वीटा कण टिशू मे बहुत कम दूर जा पाते हैं और विकिरण उर्जा से टिशू की कोशिकायें नष्ट होती है। कुछ समस्थानिक गामा (Y) किरणे और एल्फा($\alpha$) कण भी उत्सर्जित करते है। थायराइड ग्रंथि तथा थायराइड कैंसर के उपचार के लिये सबसे सफल रेडियो समस्थानिक आयोडीन-131 है।

मात्र बीटा कण उत्सर्जित करने वाले रेडियो समस्थानिक कम भेदन क्षमता के कारण सम्पूर्ण विकिरण उर्जा रोगी के विशिष्ट अंग को प्रदान कर देते है और उपचार मे सहायता प्रदान करते है। विकिरण सुरक्षा की दृष्टि से इस मामले मे विकिरण रोगी के शरीर के अन्दर ही रह जाता है और आस पास के व्यक्तिओं को बहुत कम विकिरण मिलता है। वीटा कण उत्सर्जित करने वालों समस्थानिको जैसे स्ट्रांशियम-89, येट्रियम-90, या रेनियम-188, के प्रयोग के मामलों में विकिरण सुरक्षा मुख्य रुप से रोगो द्वारा उत्सर्जित पदार्थो (मूलमूत्र आदि) के सुरक्षित देख रेख तक होती है। जब-उपचार के लिये प्रयुक्त रेडियो समस्थानिक गामा किरणे भी उत्सर्जित करता हैं तो हमे रोगी के आसपास व्यक्तियों की सुरक्षा का भी ध्यान देना चाहिये।

दर्द पूर्ण अस्थियो की मेटास्टेसीस के पैलिएशन थीरेपी के लिये फास्फोरस-32 का प्रयोग काफी अच्छा उपचार माना जाता है किन्तु इसके द्वारा दूसरे प्रकार के कैंसर जैसे ल्यूकेमिया उत्पन्न होने की सम्भावना रहती है। इसलिये दर्दपूर्ण बोन मेटास्टेसीस के पैलिएशन के लिये इस समय स्ट्रांशियम-89 रेनियम-88 या समेरियम-153 का प्रयोग ब्यापक रुप से किया जाता है। इसके द्वारा 70% रोगी दर्द से मुक्त हो जाते है।

उपचार के लिये रेडियो समस्थानिकों का प्रयोग तेजी से बदल रहा है। पूरे विश्व मे रेडियो समस्थानिकों को जैवकीय रसायनो जैसे इम्युनीग्लोबिन अणुओं (मोनोक्लोनल एन्टीवाडी) के साथ लगाकर उनका प्रयोग किसी विशिष्ट रोग के उपचार के लिये अनुसंधान जारी है। इस प्रकार के उपचार से कुछ विशिष्ट रोगो का उपचार हो सकेगा। जैसे आयोडीन-137 मोनोक्लोनल एन्टीवाडी से लिम्फीमा का उपचार।

**उपचार मे प्रयोग किये जाने वाले कुछ रेडियो समस्थानिक निम्न लिखित हैं।**

| न्यूक्लाइड | अर्ध-आयु | उत्सर्जित विकिरण | अधिकतम $\alpha$-उर्जा (Mev) | अधिकतम $\beta$-उर्जा (Mev) | अधिकतम $\gamma$-उर्जा (Kev) |
|---|---|---|---|---|---|
| 32 P | 14.3 d | $\beta$ | ____ | 1.71 | |
| 67 Cu | 2.58 d | $\beta\gamma$ | ____ | 0.58 ____ | 185 |
| 89 Sr | 50.5 d | $\beta$ | ____ | 1.49 | |
| 90 Y | 2.67 d | $\beta$ | ____ | 2.28 | |
| 131 I | 8.04 d | $\beta\gamma$ | ____ | 0.61 ____ | 364 |
| 153 Sm | 1.95 d | $\beta\gamma$ | ____ | 0.81 ____ | 103 |
| 177 Lu | 6.71 d | $\beta\gamma$ | ____ | 0.497 ____ | 208 |
| 186 Re | 3.77 d | $\beta\gamma$ | ____ | 1.08 ____ | 137 |
| 188 Re | 19.96 h | $\beta\gamma$ | ____ | 2.1 ____ | 155 |
| 198 Au | 2.7 d | $\beta\gamma$ | ____ | 0.96 ____ | 411 |
| 211 At | 7.2 h | $\alpha$ | __6.8 | ____ | ___ |
| 212 Bi | 1.0 h | $\alpha$ | __7.8 | ____ | ___ |

**बैजनाथ पी. तिवारी**
वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी
विकिरण औषधि केन्द्र
टी. एम. सी., परेल, मुंबई.

श्री बैजनाथ पी तिवारी विकिरण औषधि केन्द्र परेल, मुंबई में वरिष्ठ वैज्ञानिक के रूप में कार्यरत है। आप को नाभिकीय औषधि प्रतिबिम्बन तथा न्यूक्लीयर हे माटोलोजी में 25 वर्ष से अधिक का अनुभव आलेख प्रकाशित एवं प्रस्तुत किये गये है।

**थीरेप्यूटिक विधियो में ध्यान देने वाली बातें**

उपचार के कुछ मामलो मे रोगी को रेडियो धर्मी दवा देकर घर जाने की अनुमति दे दी जाती है लेकिन अन्य मामलो में रोगी को तब तक अस्पताल मे भर्ती रखा जाता है जब तक कि रोगी द्वारा उसके परिवार या अन्य लोगो को विकिरण से कोई हानि होने की संभावना नही रह जाती।

दो बातें ध्यान देना आवश्यक है। रेडियो न्यूक्लाइड के उत्सर्जन से बाहरी विकिरण और कन्टामिनेशन। बाहय विकिरण प्रयोग किये गये रेडियो समस्थानिक द्वारा उत्सर्जित विकिरण और उसकी अर्धआयु पर निर्भर है। रोगी द्वारा उत्सर्जित पदार्थों (Excreta) से कन्टामिनेशन की संभावना हो सकती है। इन दोनो बातो के लिये अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा संगठन (IAEA) द्वारा दिये गये मूल सुरक्षा मानको (Basis Safety Standards) एवं राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा प्राधिकरण के अनुदेशी का अनुसरण करना चाहिये।

**रेडियोथीरैपी**

बहुत तेजी से विभाजित होने वाली कोशिकायें विकिरण ऊर्जा के प्रति संवेदनशील होती है। इस लिये कुछ प्रकार के कैंसर की वृद्धि को विकिरण द्वारा रोका या कम किया जा सकता है। इस प्रक्रिया को रेडियो थीरैपी कहते हैं। प्रायः बाहर स्थिरि रेडियोसक्रिय कोवाल्ट ($^{60}Co$) श्रोत द्वारा उत्सर्जित गामा किरण पुंज द्वारा विकिरण प्रदान करने के लिये किया जाता है। विकसित देशों मे अधिक परिवर्तनशील लीनियर एक्सीलरेटर द्वारा प्राप्त उच्च उर्जा की एक्स किरणों का प्रयोग भी विकिरण प्रदान करने लिये किया जाता है। एक प्रकार की बाह्य विकिरण प्रदान करने की विधि की गामा नाइफ रेडियो सर्जरी के नाम से जाना जाता है। इस विधि मे कोवाल्ट-60 के 201 श्रोतों को एक छोटे क्षेत्र पर फोकस करके कैसर का उपचार किया जाता है। इस विधि का प्रयोग मस्तिष्क के भीतर किसी छोटे भाग मे उपस्थित कैसर को नष्ट करने के लिये किया जाता है। पूरे विश्व मे 30,000 से अधिक रोगियों को प्रतिवर्ष रेडियो थीरैपी उपचार दिया जाता है।

विकिरण श्रोत को टयूमर के सम्पर्क मे रखकर विकिरण देने की क्रिया की ब्रेकी व थीरेपी (brachytherepy) कहा जाता है। इस विधि द्वारा शरीर के स्वस्थ्य भागों को कम नुकसान होता है। इस विधि का विकास कैंसर के उपचार के लिये तेजी से विकसित हो रहा है। इरिडियम-192 के तारों का प्रयोग करके सिर और स्तन के कैंसर का उपचार किया जाता है।

विकिरण ऊर्जा के प्रयोग से कैंसर उपचार की सभी विधियों मे यह निश्चित किया जाता है कि जिस भाग को विकिरण किया जा रहा है वहॉ अधिकतम विकिरण पहुँचे और शरीर के अन्य भागो की विकिरण द्वारा कम हानि हो।

किसी विकिरण द्वारा उपचार की विधियो मे विकिरण की मात्रा साधारण तया-20-60 ग्रे होती है।

**विकिरण औंषधि अपद्रव्य (Waste)**

चिकित्सा के क्षेत्र मे रोग निदान व रोग उपचार विधियो मे प्रयुक्त रेडियो समस्थानिको के परिणाम स्वरूप मुख्यतया लो लेवल वेस्ट (LLW) का उत्पादन होता है। इन अपद्रव्यो मे कागज कपड़े, औजार, फिल्टर आदि होते है। इनमे अधिकांश रुप से कम आयु वाले रेडियो सक्रिय पदार्थ बहुत कम मात्रा मे पाये जाते हैं। इन पदार्थो को बाहर के क्षेत्र मे फेकने के पहले कुछ दिनो, कुछ महिनो या कुछ वर्षो के लिये एक सुरक्षित स्थान पर रखा जाता है।

जब रेडियो थीरैपी मे प्रयुक्त रेडियो सक्रिय श्रोत का क्षय होकर वह थीरैपी कार्य के लिये अनुपयुक्त हो जाता है तो उसे रेडियोसक्रिय अपद्रव्य समझा जाता है। कुछ रेडियोसक्रिय श्रोतो जैसे कोबाल्ट-60 कम आयु का मध्यम वर्ग का अपद्रव्य (Intermediate Low Level Waste) माना जाता है। कुछ अन्य रेडियो सक्रिय श्रोतो जैसे कैंसर की थीरैपी मे प्रयुक्त रेडियम-226 को लम्बे समय तक सुरक्षित रखा जाता है उनको डिस्पोज करने के लिये जीयोलाजिकल अध्ययन की आवश्यकता होती है।

# भारत में रेडियोसक्रिय अपशिष्ट प्रबन्धन

कंवर राज
अध्यक्ष, अपशिष्ट प्रबन्धन विभाग
नाभिकीय पुर्न:चक्रण वर्ग
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र,
ट्राम्बे मुम्बई - **400 085.**
**email-kraj@barc.gov.in**

**पस्तावना:**

सभी मानवीय गतिविधियों-घरेलू सामाजिक तथा औद्योगिकी के परिणामस्वरूप किसी न किसी प्रकार का अपशिष्ट उत्त्पन्न होता है। नाभिकीय तकनीकी द्वारा बिजली उत्पन्न करने एवम् कृषि, चिकित्सा एवम् औषधि, उद्योगों में रेडियोसक्रिय पदार्थो के उपयोग से भी अपशिष्ट पैदा होता है। ये अपशिष्ट प्रकृति में रेडियोसक्रिय एवं अ-रेडियोसक्रिय दोनो तरह के होते हैं। नाभिकीय उद्योग में उत्पन्न अ-रेडियोसक्रिय अपशिष्ट आयतन में बहुत कम होते हैं और उनका प्रबन्धन परंपरागत विधियों से किया जाता है। इस प्रस्तुति में रेडियोसक्रिय अपशिष्ट एवम् उसके प्रबंन्धन का ही विवरण दिया गया है।

नाभिकीय उद्योग का एक विशेष लक्षण यह है कि इसमें ऊर्जा के स्रोत के रूप में नाभिकीय विखन्डन का प्रयोग किया जाता है। परिणामस्वरूप ईधन सापेक्षित छोटी मात्रा से ऊर्जा की एक बड़ी मात्रा उपलब्ध होती है। उदाहरणस्वरूप एक नाभिकीय उर्जा केन्द्र एक टन प्राकृतिक यूरेनियम उपयोग करके उतनी ही ऊर्जा पैदा करता है जितना कि एक परंपरागत ऊर्जा केन्द्र 25000 टन कोयला उपयोग करके पैदा करता है। इसलिये यह स्वाभाविक है कि नाभिकीय ऊर्जा के उत्त्पादन में अपशिष्ट की परिणामात्मक मात्रा सापेक्षिक रूप से बहुत कम होती है। नाभिकीय उद्योग का दूसरा विशेष लक्षण यह है कि प्रारंभ से ही रेडियोसक्रिय अपशिष्ट के सुरक्षित व्यवस्थापन पर विशेष ध्यान दिया गया है। परमाणु ऊर्जा विभाग के प्रयत्नों के फलस्वरूप भारत में नाभिकीय रिएक्टरों के परिचालन के साथ-साथ रेडियोसक्रिय अपशिष्ट के सुरक्षित व्यवस्थापन करने के लिए तकनीक विकिसित कर ली गयी है।

**रेडियोसक्रिय अपशिष्ट**

रेडियोसक्रिय अपशिष्ट वे पदार्थ होते हैं जिनकी रेडियोसक्रिय निर्धारित मुक्तसर से ज्यादा होती है। अपशिष्ट में रेडियोसक्रियता कुछ निश्चित तत्वों के कारण होती है जिन्हे रेडियोन्यूक्लाइड कहते हैं, जिनका विकिरण उत्सर्जन द्वारा क्षय होता रहता है। अ-रेडियोसक्रिय पदार्थ जो कि स्थायी होते हैं, रेडियोसक्रिये तत्वों से भिन्न होते हैं। रेडियोसक्रिय तत्व का क्षय एक लाक्षणिक अर्द्धआयु (हाफ लाइफ) के साथ होता है जो कि मिली सेकन्ड से लेकर लाखों वर्षो तक हो सकता है। एक रेडियो न्यूक्लाइड की "अर्द्धआयु" को उस समय के रूप में परिभाषित करते हैं जिसके दौरान उसकी रेडियोसक्रियता मूल मात्रा से घटकर आधी हो जाती है। रेडियोसक्रिय अपशिष्ट प्रबंधन कार्यनीति का प्राथमिक उद्देश्य कुछ अर्द्धआयु के लिए अपशिष्ट को वातावरण से सुरक्षित व पृथक करना होता है।

**रेडियोसक्रिय अपशिष्टों के स्रोत**

भूगर्भ से यूरेनियम का खनन करके उसका शुद्धिकरण किया जाता है एवम् उसे नाभिकीय भट्टियों में प्रयोग करने के लिए ईंधन तत्वों के रूप में परिवर्तित किया जाता है। भट्टी में नाभिकीय विखंडन प्रक्रिया होती है। यूरेनियम परमाणु बड़ी मात्रा में ऊर्जा उपन्न करते हुए विखण्डित टुकड़ो में टूट जाते हैं और यह ऊर्जा ऊष्मा के रूप में प्रकट होती है। यह ऊष्मा जल को

वाष्प मे परिवर्तित कर देती है जो बिजली पैदा करने के लिए बिजलीघर मे टरबाइन को चलाती है। विखण्डित टुकड़े रेडियोसक्रिय होते हैं और ईंधन तत्वों में परिसीमित होते हैं। कुछ रेडियोसक्रिय अपशिष्ट भट्टी में न्यूट्रॉन की उपस्थिति से पदार्थो के सक्रिय होने के कारण भी पैदा हो जाते हैं। अपने लाभदायी जीवन के अन्त के पश्चात भुक्त शेष ईंधन तत्वों को भट्टी से हटा दिया जाता है और ठंडा किया जाता है। ठंडे भुक्त शेष ईंधन को यांत्रिक और रासायनिक विधियों के संयोग से पुर्न:संसोधित (रिप्रोसेस) किया जाता है। इस विधि से भट्टी में होने वाले नाभिकीय क्रियाओं के दौरान पैदा हुए अप्रयुक्त यूरेनियम एवं प्लूटोनियम को अलग किया जाता है। ये दोनों पदार्थ ऊर्जा उत्पादन के लिए लाभदायी होते हैं। रेडियोसक्रिय पदार्थो का अधिकांश भाग पुन:चक्रित कर लिया जाता है। केवल थोडा सा अंश रेडियोसक्रिय अपशिष्ट के रूप में प्रबंन्धन करने के लिए बच जाता है। रेडियोसक्रिय अपशिष्ट यूरेनियम खनन से लेकर ईंधन पुनर्संसाधन चक्र (नाभिकीय ईंधन चक्र) की हर अवस्था में उत्पन्न होते हैं। इसके अतिरिक्त रेडियोसक्रिय अपशिष्ट, नाभिकीय अनुसंधान सुविधाओं एवम् कृषि, अस्पतालों एवम् उधोगों में रेडियोसमस्थानिकों के प्रयोग से भी उत्पन्न होते हैं। नाभिकीय ईंधन चक्र को चित्र 1 में प्रर्दशित किया गया है।

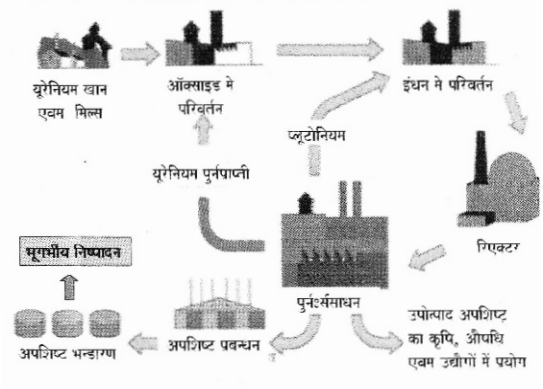


चित्र 1 में नाभिकीय ईंधन चक्र

**रेडियोसक्रिय अपशिष्ट का वर्गीकरण**

रेडियोसक्रिय अपशिष्ट विभिन्न रूपों में पैदा होते हैं जैसे कि ठोस, द्रव एवम् गैस। रेडियोसक्रिय अपशिष्ठ का सान्द्रण भी पैदा होने के स्रोत पर निर्भर करता है।

तदनुसार रेडियोसक्रिय अपशिष्ट धाराओं को सामान्यत: अल्पसक्रिय अपशिष्ट (एलएलडब्लू), मध्यमस्तरीय अपशिष्ट (आईएलडब्लू), और उच्चस्तरीय अपशिष्ट (एचएलडब्ल्यू) वर्ग में वर्गीकृत किया जाता है।

ठोस रेडियोसक्रिय अपशिष्टों को उनकी तदनुरूप भौतिक प्रकृति के अनुसार संपीडित या अ-संपीडित एवम् दहनशील वर्ग में वर्गीकृत किया जाता है। अपशिष्ट का विभिन्न प्रजातियों में वर्गीकरण उनके पृथक्करण, उचित उपचारित प्रकम के चुनाव भंडारण एवम् निपटान में लाभदायी होता है।

**नीति एवम् कार्यान्वयन**

रेडियो सक्रिय अपशिष्टों के व्यवस्थापन का मूल उद्देश्य रेडियो सक्रियता का प्रायोगिक तौर पर जितना संभव हो उतना सान्द्रण एवं परिसीमन करना है। वातावरण में केवल उन्हीं धाराओं का विसर्जन किया जाता है जिनका रेडियोसक्रियता सान्द्रण एवम् अन्तरराष्ट्रीय स्वीकार्य सीमा से नीचे होता हैं।

भारत में रेडियोसक्रिय अपशिष्ट का निपटान "परमाणु ऊर्जा रेडियोसक्रिय अपशिष्टों के संरक्षित निपटान नियम 1987" द्वारा किया जाता है। ये नियम यह सुनिश्चित करने के लिए बनाये गये हैं कि प्रत्येक संस्थान को जो रेडियोसक्रियता का उत्पादन या उपयोग करता है, अपशिष्ट का निपटान अधिकाधिक संरक्षा के साथ करना चाहिए।

रेडियोसक्रिय अपशिष्ट प्रबन्धन का दूसरा मूल उद्देश्य यह है कि केवल ऐसी पद्धतियों को अपनाया जाये जो कि वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों के स्वास्थ्य की सुरक्षा करें। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये रेडियोसक्रिय अपशिष्ट प्रबन्धन की सभी अवस्थाओं मे निम्नलिखित मूल सिद्धांतों के एक समुच्चय का अनुसरण किया जाता है,:

• उपयुक्त अभिकल्पन एवं परिचालन द्वारा अपशिष्ट के उत्पादन को न्यूनतम करना।

• आसपास की जनसंख्या एवम् संयंत्रों मे काम करनेवाले कर्मचारियों की सुरक्षा के लिए रेडियोसक्रिय अपशिष्ट प्रबन्धन और संयंत्र सुविधाओं की सुरक्षित परिचालन की पद्धतियों को अपनाना।

• न टाले जा सकने वाले रेडियोसक्रिय विसर्जन को न्यूनतम स्तर तक नियंत्रित रखना ताकि वातावरण की गुणवत्ता संरक्षित रहे।

इन सिद्धान्तों को विकिरण के प्रभाव से आमजनता और प्रक्रमों मे काम करने वालें कर्मचारियों की सुरक्षा के लिए विकिरण सुरक्षा के सिद्धान्तों के बारे में एक सार्वत्रिक समझ है। ये विकिरणी संरक्षण बचाव के अन्तरराष्ट्रीय आयोग (इंटरनेशनल कमिशन फॉर रेडीयोलोजिकल प्रोटेक्शन) की संस्तुतिओं पर आधारित हैं। आयोग ने आम जनता और प्रक्रम में काम करने वालें कर्मचारियों के लिए विकिरण उद्‌भासन या डोज की उच्चतम सीमा निर्धारित की है। इन्ही संस्तुतियों के आधार पर परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद ने हमारे देश में अनुसरण के लिए विकिरण उद्‌भासन की उच्चतम सीमा को सुनिश्चित किया है। हमारे संयंत्रों में, विकिरण उद्‌भासन की वास्तविक मात्रा इन सीमाओं का एक छोटा सा अंश ही होता है।

**प्रक्रम और प्रौद्येगिकी**

रेडियोसक्रिय अपशिष्टों के उत्पादन की अनेक भिन्नताओं की दृष्टि से उनके उपचारित करने के प्रक्रम भी भिन्न-भिन्न है। इन प्रक्रमों के विकास और तकनीकी संबंधित कार्य छटे दशक के शुरू में भाभा परमाणु अनुसन्धान केन्द्र, ट्रॉम्बे में लघु संयंत्रों और प्रयोगशालाओं में प्रारंभ किये गये।

यह अग्रणी कार्य रेडियोसक्रिय अपशिष्ट की अनुबन्धन के लिए लिए आधात्री (मैट्रिक्स) और विभिन्न प्रक्रमों के विकास में फलित हुआ। "आधात्री" शब्द उन पदार्थो के लिए प्रयुक्त होता है जो रेडियो न्युक्लाइड को भौतिक पकड़ द्वारा उसे निश्चलित करते हैं या रासानिक जाल में समावेशन द्वारा पकड़ कर रखते हैं। दूसरे शब्दों में, अनुबन्धन शब्द में वे सभी सक्रियायें निहित हैं जो रेडियोसक्रिय अपशिष्ट को रूपांतरित करती है और उसे परिवहन, भंडारण और विस्थापन के लायक बनाती हैं।

भाभा परमाणु अनुसन्धान केन्द्र ने प्रक्रम, प्रौद्येगिकी, उपयन्त्र एवं समायोजन के विकास के लिये स्वदेशी विकास पर आधारित, रेडियोसक्रिय अपशिष्ट प्रबन्धन सुविधाओं को महाराष्ट्र मे ट्रॉम्बे और तारापुर, राजस्थान में रावतभाटा और तमिलनाडु राज्य में कलपक्कम में स्थापित किया है। इनमें से कुछ सुविधायें सत्तर के दशक के शुरू से ही सक्रिय है। इनके अभिकल्प, संरचना, प्रचालन एवं अनुरक्षण द्वारा महत्वपूर्ण अनुभव प्राप्त किया गया है। इस प्रकार प्राप्त विशेषज्ञता ने रेडियोसक्रिय अपशिष्ट प्रबन्धन तन्त्र के अभिकल्पन में मानकों का निर्धारण किया है जिनका उपयोग परमाणु ऊर्जा नियमक परिषद भारत सरकार द्वारा सभी आनेवाले भारतीय नाभिकीय ऊर्जा केन्द्रों के लिए रेडियोसक्रिय अपशिष्ट प्रबन्धन सुविधाओं के अभिकल्पन एवं संरचना के लिये किया जा रहा है।

रेडियोसक्रिय अपशिष्ट प्रबन्धन के लिए प्रयुक्त प्रक्रम एवम् तकनीकी का एक विहंगावलोकन यहाँ प्रस्तुत किया गया है।

**संपृथकन एवम् भन्डारण**

अपशिष्ट धाराओं को उनकी प्रकृति एवम् रेडियोसक्रिय घटकों की मौजूदगी के अनुसार पृथक करना प्रक्रम के अनुसरण का एक बहुत ही महत्वपूर्ण कदम है। पृथक किया हुआ अपशिष्ट, योग्य रूप में भंडारित किया जाता है। ठोस अपशिष्ट चिन्हित एवं संवातित क्षेत्रो में संकुलित किया जाता है जो की पदार्थ प्रहस्तन उपकरण जैसे कि क्रेन से सुसज्जित रहते हैं। द्रव अपशिष्ट विशेष रूप से बनाये गये धारात्रियो में भंडारित किया जाता है, जिनमें परिरक्षण एवं अन्य सुरक्षा के उपाय उपलब्ध आवश्यक रहते हैं। लघु अद्ध आयु के रेडियो न्युक्लाइड

से निहित द्रव अपशिष्ट का भंडारण, अपशिष्ट के विसर्जन व निपटान करने से पहले समयान्ताल प्रदान करता है। दूसरी तरफ, उच्च स्तरीय तरल अपशिष्ट की क्षय ऊर्जा कम करने के लिए लम्बे समय तक भन्डारित किये जाते हैं। सामान्यतया द्रव अपशिष्ट का स्थानांतर विशेष से अभिकल्पित पाइपिंग के द्वारा किया जाता है। इसके साथ अपशिष्ट की प्रकृति, विकिरण परिरक्षण और सेवा-में-निरीक्षण का ध्यान रखा जाता है। कुछ हालात में, जहॉ आयतन या रेडियो सक्रियता कम होती है, वहॉ विशेष रूप से बनाये गये टैंकों का भी द्रव अपशिष्ट स्थानांतरण में प्रयोग किया जाता है।

**रासायनिक उपचार**

लघुस्तरीय रेडियोसक्रियता वाले अपशिष्ट नाभिकीय ऊर्जा केन्द्रों एवम् दूसरी नाभिकीय सुविधाओं में पैदा होते हैं। इन अपशिष्टों का उपचार सीजीयम 137 ($^{137}Cs$) एवम् स्ट्रॉन्शीयम 90 ($^{90}Sr$) जैसे रेडियो न्यूक्लाइड को अलग करने के लिए किया जाता है। इस विधि को सह-प्रक्षेपण कहते है और इसमें विभिन्न रसायन जैसे कि बेरियम क्लोराइड, सोडियम सल्फेट, पोटेशियम फेरोसाईनाईड, कॉपर सल्फेट आदि का प्रयोग होता है। ये रसायन इष्टतम पीएच (pH) मूल्य पर पूर्व निश्चित मात्रा में द्रव बहि:स्राव के साथ मिलाये जाते हैं। परिणात्मक प्रक्षेपण को निर्मलन ऊर्णित्र (क्लेरिफ्लोक्यूलेटर) (चित्र-2) में नि:सान्दन के लिए रखते हैं। इस प्रकार अधिप्लवी द्रव रेडियो सक्रियता से मुक्त होता है और तनुकरण (डायल्युशन) एवम् अनुवीक्षण (मॉनिटरिंग) के उपरान्त विसर्जित कर दिया जाता है। निर्मलन उर्णित्रसे मिले आपंक (स्लज) को निस्तारण, निस्पन्दन एवम् अपकेन्द्रियकरण के द्वारा और सांद्रित किया जाता है। द्रव अपशिष्ट में मूल रूप से उपस्थित रेडियोसक्रियता का अधिकांश भाग परिणामात्मक ठोस में निहित रहता है।

चित्र-2 निर्मलन उर्णित्र

इनका निपटान ठोसीकरण द्वारा किया जाता है, जिसमें सीमेंट का प्रयोग किया जाता हैं।

**आयन विनिमय**

आयन विनिमय तकनीक, द्रव अपशिष्ट से विशिष्ट रेडियो न्यूक्लाइड हटाने के लिये प्रयुक्त की जाती है। प्राकृतिक एवम् कृत्रिम दोनो आयनन विनिमय पदार्थों का प्रयोग किया जाता है। प्राकृतिक रूप से प्राप्त होने वाले आयन विनिमायक वर्मिक्यूलाइट, बेन्टोनाईट इत्यादि प्रयुक्त होते हैं। रिसोरसिनोल फॉरमल्डिहाईड बहुसंघनित रेजिन, अमोनियम मालीव्डोफास्फेट आदि कृत्रिम आयन विनिमायक के रूप में प्रयुक्त किये जाते हैं। अपनी पुर्नउत्पादक प्रकृति एवं उच्च विनिमय क्षमताओं के कारण कृत्रिम आयन विनिमायक भारत में भुक्त शेष ईधन भंडारण कुंड एवम् पुर्न:संसाधन संयंत्रों से मिलने वाले द्रव अपशिष्ट के उपचार के लिए बहुतायत में प्रयुक्त होते है (चित्र-3)

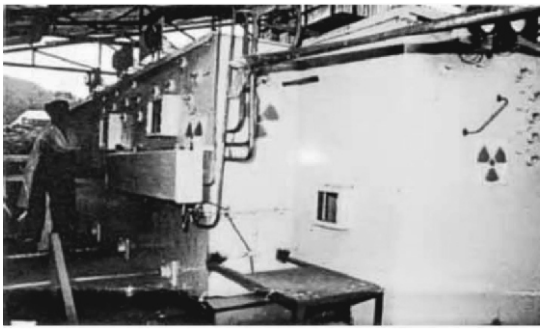

चित्र-3 आयनन विनिमय

कृत्रिम आयन विनिमायक पर आधारित प्रक्रम आयतन के उच्च अपचयन में अग्रणी है। ये प्रक्रम उच्च विसंदूषण गुणक (डीकंटामिनेशन फॅक्टर) भी प्रदान करते हैं जिसे अपशिष्ट में उपस्थित रेडियोसक्रियता एवम् विसर्जित बहि:स्राव के अनुपात के रूप में परिभाषित किया जाता है।

**वाष्पन**

वाष्पन विधि द्रव अपशिष्ट के सान्द्रन के लिए प्रयोग की जाती है। द्रव बहि:स्राव का आयतन न्यूनतम करने के लिये भाप से गरम होने वाले एवम् प्राकृतिक बाष्पन दोनो ही विधियों का इस्तेमाल किया जाता है।

प्रक्रम का चुनाव अपशिष्ट की रेडियोसक्रियता एवं आयतन और क्षेत्र की जलवायु दशाओं से निर्धारित किया जाता है। भाप से गरम होने पर आधारित बाष्पन को निम्न आयतन एवम् उच्च सक्रियता के अपशिष्ट के लिए प्रयोग किया जाता है (चित्र-4/अभिकल्प सामान्यत: ताप सायफन (थर्मोसायफन) सिद्धांत पर आधारित होता है जिसमे तत्वों की मरम्मत की आवश्यकता न्यूनतम होती है।

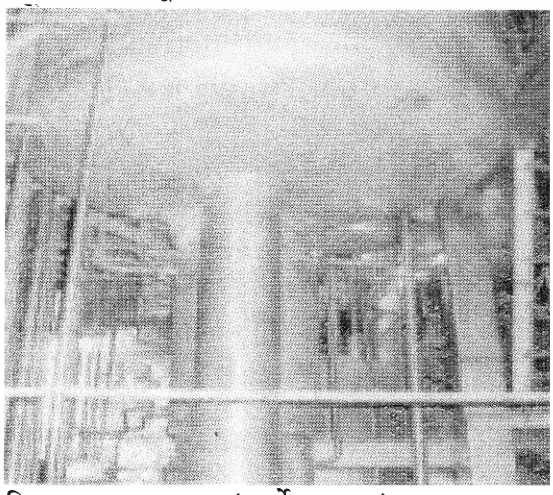

चित्र-4: ताप सायफन (थर्मोसायफन) वाष्पन

सौर वाष्पन कम सक्रियता वाले तथा बड़े आयतनों के अपशिष्ट के लिए प्रयोग होता है। इस प्रकार की सुविधा सामान्यत: ऐसे क्षेत्रों में होती है जहॉ सुविधाजनक जलवायु हो जैसे कि उच्च सर्वव्यापक ताप, कम आद्रता और कम वर्षा। राजस्थान के क्षेत्रों में जहॉ प्रचुर सौर उर्जा उपलब्ध है द्रव अपशिष्ट के बाष्पन के लिये प्रयोग किया गया है (चित्र-5)

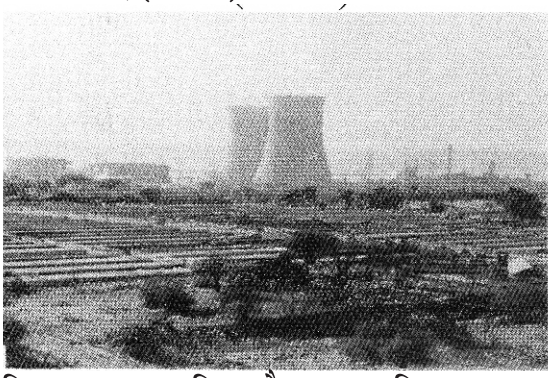

चित्र-5: राजस्थान स्थिर सौर बाष्पन सुविधा

**झिल्ली प्रक्रम**

झिल्ली आधारित प्रक्रम जैसे कि प्रतिलोम परासरण (रिवर्स ओसमॉसिस) एवं परानिस्यंदन (अल्ट्राफिल्ट्रेशन) अत्यावश्यक रूप से निम्न स्तरीय द्रव अपशिष्ट के लिए प्रयोग किया जाता है। ये अधिकतर आगे बहि:स्राव के सदूषण के लिए अन्य उपचार विधियों जैसे कि रासायनिक उपचार या आयन विनिमय प्रक्रम के साथ संयुक्त किये जाते हैं। उत्क्रम परासरण प्रक्रम में अपशिष्ट को पहले पीएच समायोजन के लिए पूर्व उपचारित किया जाता है और तब जटिल अभिकर्ताओं (कंप्लेक्सिंग एजेंटस) को हटाने के लिए छाना जाता है। अधिकतर पालीएमाइड प्रकार की झिल्ली, अपशिष्ट को दो घटकों में पृथक करती है। इस प्रक्रम द्वारा अपशिष्ट का आयतन सामान्यत: दस के गुणक तक घट जाता है (चित्र-6)

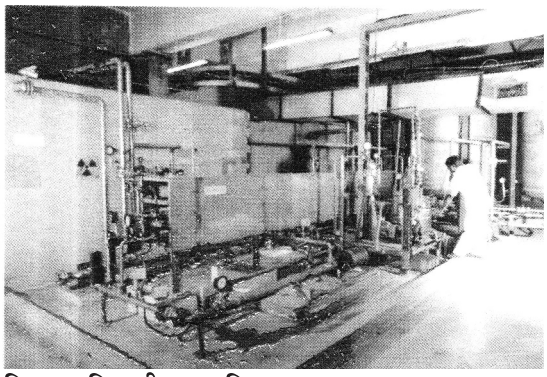

चित्र-6: झिल्ली आधारित प्रक्रम

**अपशिष्ट का ठोसीकरण**

विभिन्न अपशिष्ट उपचार के अन्तिम स्रोत हैं-रासायनिक उपचार से प्राप्त आपंक, प्रयुक्त आयन विनिमय पदार्थ, बाष्पकों से सान्द्रित द्रव आदि। सामान्य रूप से इन स्रोतों को निपटाने से पहले ठोस रूप में बदलने की जरूरत होती है। ठोस रूप में बदलने का उद्देश्य प्रहस्तन, स्थानान्तरण, भंडारण एवम् निपटान की सभी अवस्थाओं के दौरान वातावरण में रेडियोसक्रियता के मुक्त होने को रोकना एवम् मर्यादित करना है। रेडियोन्यूक्लाइड के निश्चलीकरण के लिए ठोस रूप को स्थायी निस्थिर और होने की जरूरत होती है। ठोस रूप में बदलने के लिए आव्यूह (मैट्रिक्स) का चुनाव अपशिष्ट मे उपस्थित रेडियोसक्रियता और रसायनों के हिसाब से अपशिष्ट के साथ मिलनसारिता के आधार पर किया जाता हे। ठोसीकृत अपशिष्ट की निक्षालम दर (लीचिंग रेट) निम्न होती है। मैट्रिक्स के चुनाव को प्रभावित करने वाले अन्य कारण है भंडारण सह निपाटान तन्त्र और निपटान स्थल के विशिष्ट लक्षण। रेडियोसक्रियता के निश्चलीकरण के लिए सामान्य रूप से प्रयुक्त होनेवाले प्रक्रम हैं सीमेन्टीकरण, बहुलीकरण एवं कांचीकरण।

**सीमेन्टीकरण**

सीमेन्ट एवं संमिश्र आपेक्षिक रूप से निम्न स्तरीय रेडियोसक्रिय सान्द्रित, रासायनिक आपंको इत्यादि में विस्तृत रूप से प्रयुक्त किये जाते हैं। सीमेन्टीकरण प्रक्रम का प्रचालन सादगी एवम् कम कीमत के कारण यह विधि सर्वव्यापक रूप से प्रयोग होती है। ड्रम अन्तरनिहित मिश्रण से युक्त टम्बलर मिश्रण यन्त्र टुकड़े संक्रियाओं (बैच ऑपरेशन) में प्रयुक्त होते हैं (चित्र-7) सीमेन्टीकरण का प्रयोग मध्य स्तरीय अपशिष्ट का अपने स्थानिक निश्चलीकरण के लिए भी होता है। स्वस्थाने सीमेन्टीकरण बडी मात्रा में प्रक्रम दर से विकिरण कर्मियों के लिए अत्यंत छोटा उद्भासन का परिणाम देता है।

चित्र-7: सीमेन्टीकरण प्रक्रम

**कांचीकरण**

भुक्तशेष नाभिकीय ईधन के पुन:संसाधन के समय उच्च स्तरीय रेडियोसक्रिय द्रव अपशिष्ट पैदा होता है। प्रारंभ में यह अपशिष्ट भूमिगत स्टेनलेस स्टील की टंकियों में भंडारित किया जाता है जिसमें शीतलन मानीटरन स्तर(लेबल मानीटरींग) और स्थानांतरण की सुविधा होती है। अल्प जीवी रेडियोन्यूक्लाइडस के क्षय के उपरान्त उच्च स्तरीय अपशिष्ट को ठोस के

रूप में बदला जाता है। भाभा परमाणु अनुसन्धान केन्द्र में उच्च स्तरीत अपशिष्ट के निश्चलीकरण के लिए विभिन्न मैट्रिक्स का विकास किया गया है, जैसे कि कांच, कृत्रिम खनिज एवं सिरेमिक। भारत में औद्योगिक स्तर के निश्चलीकरण के लिए बोरोसिलीकेट और दूसरे संमिश्रों के कॉच को चुना गया है। यह एक कांचीकृत मैट्रिक्स है इसलिय इस प्रक्रम को कांचीकरण कहते है।

कांचीकृत अपशिष्ट में बहुत ही उच्च विकिरण प्रतिरोधकता, उत्कृष्ट ताप स्थिरता एवम् निम्न निक्षालनता जैसे गुण होते हैं।

कांचीकरण संयंत्र में अपशिष्ट को पहले वाष्पक में सन्द्रित करते है। अपशिष्ट में उपस्थित नाइट्रिक अम्ल को एक प्रक्रम, जिसे विनाइट्रिकरण कहते हैं, के द्वारा निकाला जाता हैं। इसमें संकुलित स्तम्भ प्रभाजक (पॅक्ड कॉलम फ्रॅक्शनेटर) एक बन्द लूप में प्रयुक्त होता है। तब सान्द्रित अपशिष्ट को प्रक्रम पात्र में कांच बनानेवाले योज्य पदार्थो के साथ मिलाते हैं। यह प्रक्रिया 1000 - 1050$^0$C के ताप के दायरे में की जाती है। प्रक्रम पात्र को प्रेरण विधि (इंडक्शन हिटिंग) द्वारा विद्युत से गर्म करते हैं। उत्पाद को एक पृथक स्टेनलेस स्टील के कनस्तर में डाला जाता है (चित्र-8)। शीतलन के बाद

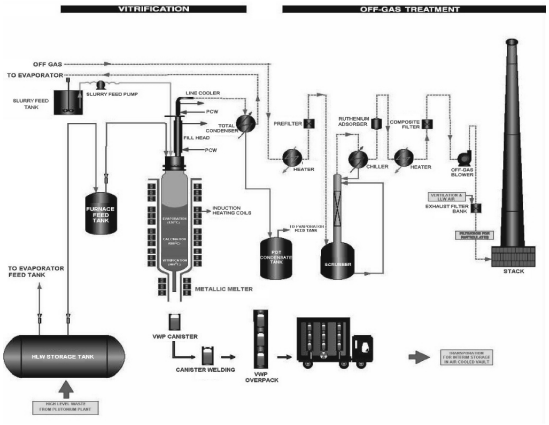


चित्र-8: कांचीकरण प्रक्रिया

सुदूरहस्त विधि द्वारा कनस्तर का ऊपरी ढक्कन वेल्ड किया जाता है (चित्र-9)। इस प्रकार के दो या तीन कनस्तरों को दूसरे स्टेनलेस स्टील के अतिभरण के अन्दर रख देते हैं और पुन:वेल्डिंग कर दी जाती है। यह सभी कार्य 1.5 से 2.2 मीटर मोटी कन्क्रीट की दीवारों के बने प्रचालन कोष्ठकों में किये जाते हैं। यह कोष्ठक विशेष पदार्थ प्रहस्तन उपकरणों से सज्जित रहते है, जिसमें आधुनिकतम रोबोटिक्स जैसे कि परिचालक, ग्रैपलर, क्रेन आदि का प्रयोग होता है। देखने की सुविधा के लिए, बंद परिपथ सीसी टी वी कैमरे और परिरक्षण खिड़कियों को कांचीकरण प्रक्रम कोष्टको में लगाया जाता है।

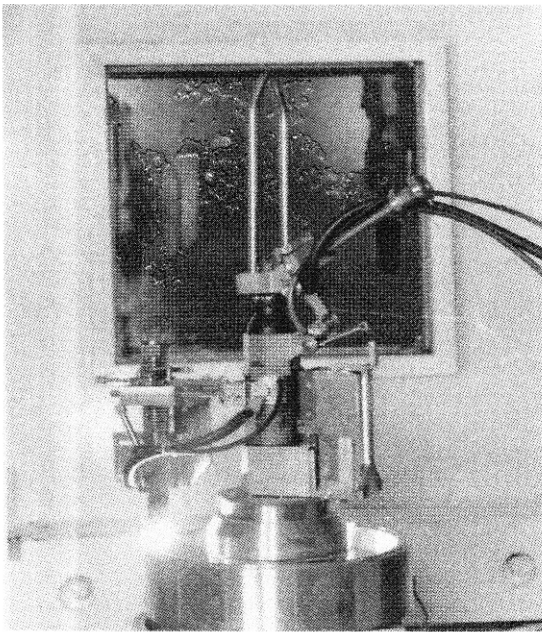

चित्र-9: सुदूर विधि द्वारा कनस्तर ढक्कन का वेल्डींग

भारत मे विकसित प्रेरण ऊष्मा का उपयोग करके धात्विक गलक की यह तकनीक पुर्णतया देशी है। अपशिष्ट निश्चलीकरण संयंत्र ट्रॉम्बे तथा तारापुर इस तकनीक पर आधारित है।

तारापुर में कांचीकरण संयंत्र प्रगत कांचीकरण तन्त्र (एव्हीएस) स्थापित किया गया है चित्र-10)। यह सुविधा प्रेरण ऊष्मा के स्थान पर जूल उष्मा तकनीक का उपयोग करती है। प्रगत कांचीकरण तन्त्र का

मुख्य यंत्र "जूल ऊष्मा सिरेमिक गलक" होता है। आरंभ में कांच को सहायक उष्मक द्वारा गर्म करके संचालित बनाया जाता है और उसके बाद का गर्म होना, जूल उष्मा तकनीक में बदल जाता है। तन्त्र को लगातार चलाया जा सकता है जैसे कि धात्विक गलक में नहीं हो सकता है। इससे उच्च प्रक्रम दर का परिणाम मिलता है।

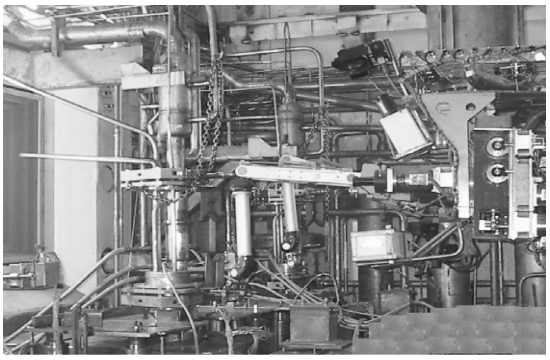

चित्र-10: संयंत्र प्रगत कांचीकरण तन्त्र (एव्हीएस) का अर्न्तभाग

उच्चस्तरीय अपशिष्ट के लिये प्रेरण भट्टी में कांचीकरण तकनीक के सफल विकास एवं स्थापन के उपरान्त, एक प्रगत कांचीकरण सयंत्र, जूल भट्टी का विकास किया गया है। यह कांच के जूल उष्मित सिद्धान्त पर आधारित है। जूल ऊष्मा को $I^2R$ के रूप में इगिंत किया जाता है। गलित कांच 600 से 700°C ताप से ऊपर विद्युतीय रूप से चालित होता है। विद्युतीय शक्ति के उपयोग से गलित कांच में ऊष्मा पैदा की जाती है। भट्टी अ-चालित सिरेमिक पदार्थ से बनी होती है। गलक में उच्च निकेल-कोमियम सम्मिश्र के बने इलेक्ट्रोड होते है। इलेक्ट्रोड गलित कांच में से विद्युत वहन के लिये भट्टी की पार्श्व दीवारों में लगाये जाते हैं। इलेक्ट्रोड के बीच से विद्युत प्रवाह को नियमित करके गलित कांच का ताप नियन्त्रित किया जाता है। इस विद्युत शक्ति आपूर्ति में गलित कांच के ऊपर से भरित कांच फिट/स्लरी को भी गलाने की क्षमता होती है। कांच में से विद्युत प्रवाह प्रारंभ करने के लिये इलेक्ट्रोड के बीच के कांच का ताप 600°C तक सिलिकान कार्बाइड प्लेनम उष्मक से बढाया जाता है।

**रेडियोसक्रिय गैसीय अपशिष्ट**

अधिकतर नाभिकीय स्थापनों को भवनों के अन्दर बनाया जाता है जिन्हें वातावरणीय दाव की अपेक्षा कुछ कम दाब पर रखा जाता है। इसे वायु संबाहक तन्त्र का प्रयोग करके प्राप्त किया जाता है। इसे ऐसे अभिकल्पित करते हैं कि जरूरत के अनुसार त्रृणात्मक दाब और प्रवाह मिले। यह नाभिकीय स्थापनों से रेडियोसक्रिय पदार्थो के बाहर विनिर्मुक्त नहीं होने को सुनिश्चत करता है।

सुविधा के अन्दर काम करनेवाले कर्मचारियों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिये आवश्यक वायु प्रवाह बनाया जाता है। यद्यपि यह हवा सामान्य रूप से रेडियोसक्रिय मुक्त होती है फिर भी प्रचुर सावधानी के तौर पर इसका विसर्जन से पहले उचित उपचार किया जाता है। इसी प्रकार अपशिष्ट निश्चलीकरणों एवं ईधन पुन:र्संसाधन जैसी नाभिकीय सुविधाओं के प्रचालन के दौरान उत्पन्न वाष्प और गैसों का भी विसर्जन से पहले उपयुक्त तकनीकों द्वारा उपचारित किया जाता है। गैसीय अपशिष्ट को उपचारित करने के लिए जिन तकनीकों का उपयोग किया जाता है, वे हैं : संघनन, मार्जन, अधिशोषण, निस्पंदन आदि। सामान्य रूप से प्रयोग होने वाले निस्यंदको के प्रकार है : उच्च दक्षता कणीय वायु निस्यंदक (एचईपीए) और संयुक्त कणीय एवं आयोडीन निस्यंदक (सीपीआईएफ)।

हेपा नियन्त्रक समायोजन आतिसूक्ष्म आकार जैसे कि एक मीटर के दस लाखवें हिस्से से भी कम के कांच तन्तुओं से तैयार विशेष निस्यंदक माध्यम होते हैं। ये निस्यंदक आतिसूक्ष्य कणों के लिए बहुत ही उच्च कोटि की निपटान दक्षता लगभग 99.97 प्रतिशत प्रदान करते हैं। मानक हेपा निस्यंदक (चित्र-11) के गुणक प्रहस्तन होने वाली गैस वायु के आयतन पर निर्भर करते हुए अच्छी तरह से अभिकल्पित निस्यंदक

बैकों में स्थापित किये जाते हैं।

चित्र-11: अभिकल्पित हेपा निस्यंदक

संयुक्त कणकीय एवम् आयोडीन निस्यन्दक (सीपीइएफ) दूसरे प्रकार का निस्यंदक है। हीपा निस्यंदक कणों पर जमा होने वाली आयोडीन के निपटान के लिए संयुक्त निस्यन्दकों के एक अभिन्न अंग होते हैं। गैसीय आयोडीन का निपटान सक्रिय चारकोल-जो कि उपयुक्त रसायनों जैसे सिल्वर नाइट्रेट-से अन्तरभरित रहता है, के द्वारा किया जाता है।

नाभिकीय बिजली संयंत्रों और अनुसन्धान भट्टियों में संयंत्रों के सामान्य प्रचालन एवं पूर्वानुमानित असामान्य प्रचालनों के लिए पृथक वायु सफाई तन्त्र लगाये जाते हैं। सामान्य प्रचालन के लिए वायु सफाई तन्त्र के साथ हेपा निस्यंदक लगाया जाता है। नाभिकीय बिजली संयंत्रों की आपात वायु सफाई तन्त्र असामान्य दशाओं में आयोडीन एवम् सभी कणिकाओं को रोकने के लिए (सी पी आई एफ) बने होते हैं। ईधन पुन:र्ससांधन संयंत्रों एवम् अपशिष्ट कांचीकरण सुविधाओं में विस्तृत गैसीय अपशिष्ट उपचार तन्त्र प्रयुक्त किये जाते हैं। इसमें अथ:प्रारूप संगणक (डाऊनस्ट्रीम कंडेंसर), कुहासा विलोपक (मिस्ट इलिमिनेटर), अधिशोषक मार्जक (स्कबर) एवं हीपा निस्यंदक (हीपा फिल्टर) लगे रहते है। उपचारित गैसीय अपशिष्ट का हीपा निस्यंदक बैंक में अन्तिम निस्यंदन करने के बाद और विभिन्न न्युक्लाईडस के लिए लगातार मानीटरिंग के साथ लम्बी चिमनी मे से तनुकरण विसर्जित कर दिया जाता है। इससे सुनिश्चित होता है कि वातावरण में गैसीय विसर्जन जितना कम सम्भव है उतना और निर्धारित सीमाओं के भलिभॉति अन्दर है।

**भुक्त शेष विकिरण स्त्रोत**

विभिन्न प्रकारों एवं क्षमताओं के विकिरण स्रोत अस्पतालों, उद्योगों एवं अनुसन्धान संस्थानों में प्रयुक्त होते हैं। अस्पतालों में इनका मुख्यत: प्रयोग रेडियोचिकित्सा एवं बीमारी के निदान के लिए होता है। कुछ उद्योग जिसमें विकिरण जनित स्रोतों का प्रयोग किया जाता है, वे हैं: स्टील, कागज, पेट्रोलियम, सीमेन्ट, खाद, शोधन कार्यशाला और तापीय बिजलीघर संयंत्र। पदार्थो एवम् अवयवों के गुण की जॉच पड़ताल के लिए औद्योगिक विकिरण चित्रण (रेडियोग्राफी) में भी इन स्रोतों का बड़ी मात्रा में प्रयोग होता है।

अनुसन्धान संस्थान सामान्यत: विभिन्न प्रकार के पदार्थो के अध्ययन के लिए विकिरण खोजक एवं विकिरण जनक का प्रयोग करते हैं।

इन स्त्रोतों के अधिकांश की आपूर्ति, परमाणु उर्जा विभाग के विकिरण एवं समस्थानिक तकनीकी परिषद (ब्रिट) द्वारा की जाती है। चूँकि सभी विकिरण स्त्रोतों का समय के साथ क्षय होता है, अत: इनकी क्षमता कम होने के बाद, यह अपशिष्ट के रूप में उपचारित किये जाते हैं।

प्रयोग के बाद देश के समस्त उपयोग कर्ताओं से भुक्त शेष विकिरण स्रोत भाभा परमाणु अनुसन्धान केन्द्र को वापस कर दिये जाते हैं। भुक्त शेष विकिरण स्रोतों के हस्तन और स्थानांतरण की सभी

अवस्थाओं पर सुरक्षा निश्चित करने के लिए एक विस्तृत कार्य पद्धति का पालन किया जाता है। भुक्त शेष विकिरण स्रोतों की ताकत, उनके प्रयोग करने की क्रिया के क्षेतों पर निर्भर करते हुए मिलीक्यूरी से हजारों क्यूरी तक होती है। उनकी अर्धायु भी रेडियोन्युक्लाइड पर निर्भर करते हुए परिवर्तित होती है।

भुक्त शेष स्रोत, निपटान के लिए उपयुक्त बनाने के पहले उनका अनुकूलन किया जाता है। तब वे या तो सुदृढ कंक्रीट खाईयों में या टाईल्स छिद्र मे निपटाये/भंडारित किये जाते हैं। अभियांत्रिक तन्त्र के प्रकार का चुनाव अनुकूलित भुक्त शेष स्रोत में उपस्थित रेडियोन्युक्लाइड की प्रकृति कुल अन्तरनिहित सक्रियता एवं बाहरी सतह पर विकिरण क्षेत्र पर आधारित होती है। ट्रॉबे एवं कल्पक्कम में स्थित अपशिष्ट प्रबन्धन सुविधाए भुक्तशेष स्त्रोत के भंडारण निपटान के लिए पातिक केन्द्र है।

**रेडियोसक्रिय ठोस अपशिष्ट**

नाभिकीय प्रचालन विभिन्न प्रकार के ठोस अपशिष्ट पैदा करते हैं। इनमें ऊतक (टिश्यु) पदार्थ, कांच के पदार्थ, प्लास्टिक एवम् रक्षित रबर का सामान रहता है। इसके अतिरिक्त दूसरे मिश्रित अपशिष्ट भी पैदा होते हैं जैसे कि प्रयुक्त घटक जैसे कि निस्यदक, पाईपिंग, संरचना वस्तुयें, सेवा से हटाये गये उपकरण आदि। इस प्रकार के ठोस अपशिष्ट सामान्यतः निम्न एवम् मध्यम स्तर के वीटा एवम् गामा विकिरण और कुछ स्थितिओं में अल्फा संदूषण के निम्न स्तर के होते हैं। रेडियोसक्रिय अपशिष्ट के उपचार में प्रयोग होने वाले कुछ प्रक्रम हैं-विसंदूषण (डिकंटामिनेशन), पिंडन (कंपेक्शन) और भस्मीकरण द्वारा आयतन अपचयन (व्हॉल्युम रिडक्शन) (चित्र-12)

चित्र-12: अभिकल्पित भस्मक प्रक्रम

**विसंदूषण**

विसंदूषण प्रक्रम का उद्देश्य हैं पदार्थ से रेडियोसक्रियता को हटाना। प्रक्रमों की एक विस्तृत विविधता इस प्रयोजन के लिये प्रयोग की जाती है जैसे कि रेत धमन, इलेक्ट्रो, पॉलिशिंग, रासायनिक जटिलीकरण और पराश्रव्य (अल्ट्रासोनिक) विसंदूषण विभिन्न उद्देश्यों के लिए किया जाता है। उदाहरण के लिए निपटान से पहले रेडियोसक्रियता को कम करना, विसदूषित पदार्थो के पुनर्चक्रण द्वारा अपशिष्ट आयतनों को न्यूनीकृत करना या कार्य क्षेतो में मरम्मत की सुविधा के लिए विकिरण क्षेतों में कमी करना। घटकों का पराश्रव्य सहतार्थ (अल्ट्रासोनिक असिस्टेड) विसंदूषण उनके पुर्नचक्रण एवम् पुनः उपयोग में सहायता के लिए नियमित रूप से किया जाता है। सेवा से हटाये गये यंत्रों एवम् उपकरणों का विसंदूषण स्वस्थाने विधियों का प्रयोग करके उनके निपटान के पहले किया जाता है।

**आयतन - अपचयन**

ठोस रेडियोसक्रिय अपशिष्टों को पहले उनकी संपीडकता एवम् दाहकता के आधार पर दो समूहों में पृथक किया जाता है। निम्न एवम् मध्य स्तर की सक्रियता वाले संपीडक अपशिष्ट के आयतन का

अपचयन (चित्र-13) नियंत्रित दशाओं में गांठन (बेलिंग) विधि द्वारा किया जाता है। उच्च स्तर की विकिरण मात्रा संबधित ठोस अपशिष्ट को सुदूर विधि से हस्तन किया जाता है। आकार कटौती के लिए प्रयोग होने वाली तकनीकों में विशेष औजारों का प्रयोग करके प्रबंन्धित होने लायक में कटाना शामिल है।

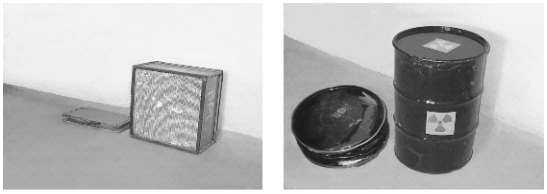

चित्र-13:संपीडक अपशिष्ट के आयतन अपचयन

राजस्थान एवम् मद्रास परमाणु बिजलीघर में इसी प्रकार की एक तकनीक का प्रयोग करके परमाणु बिजलीघर के एक शीतलन प्रणालक, जिसमें बहुत ही उच्च विकिरण क्षेत्र था, जिसका निपटान ठोस अपशिष्ट के रूप में किया गया है। दाहक रेडियोसक्रिय अपशिष्ट का भस्मीकरण अन्तिम आयतन में करीब 50 के गुणक की कमी का परिणाम देता है। निम्न स्तरीय ठोस रेडियोसक्रिय अपशिष्ट के लिए विशेष रूप से अभिकल्पित भस्मक प्रयोग में है। एक प्राथमिक भस्मक में भट्टी चक्रवात वियोजक (सायक्लोन सेपरेटर), शीतलक, थैला निस्यंदक (बैग फिल्टर) और उच्च दक्षता कणकीय वायु निस्यंदक होते हैं। भस्मीकरण के बाद बची हुई राख को सीमेन्ट मैटिक्स में निश्चलीकृत किया जाता है।

**भंडारण एवम् निपटारण**

ठोस रेडियोसक्रिय अपशिष्ट को इकट्ठा किया जाता है और प्रहस्तन एवं स्थानांतरण में लगे हुए व्यक्तियों के बचाव के लिए जरूरी सुरक्षा प्रक्रियाओं का पालन करते हुए भन्डारण एवं निपटान स्थल तक स्थानांतरित किया जाता है। मानक 200 लीटर क्षमता वाले ड्रमों और दूसरे उपयुक्त संकुलनों को इस प्रयोजन के लिए अपशिष्ट में उपस्थित रेडियोसक्रियता के सान्द्रण एवं प्रकार पर निर्भर करते हुए आवरण (शिल्डिंग) के साथ प्रयोग किया जाता है। अपशिष्ट संकुलनों की उनकी अन्तरनिहित रेडियोसक्रियता के लिए जांचा है और इस प्रक्रिया को "अस्सेइंग" कहते है (चित्र-14)

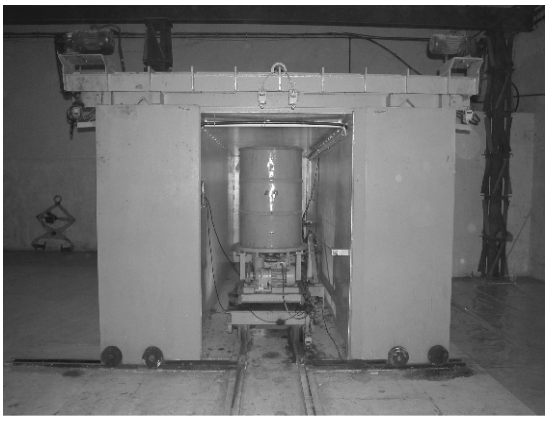

चित्र-14:अस्सेइंग प्रक्रिया

अन्तरि भंडारण एवम् निपटान के लिए अपशिष्ट संकुलकों का स्थानांतरण विशेष रूप से अभिकल्पित पात्रों एवम् वाहनों से किया जाता है। रेडियोसक्रिय अपशिष्ट के स्थानांतरण के दौरान मुख्य ध्यान देने वाली बाते हैं:

- जरूरी आवरण द्वारा विकिरण से व्यक्तियों का बचाव और
- किसी सुर्घटना की स्थिति में संकुलक की सुरक्षा।

इन उददेशों को अपशिष्ट संकुलन मे वर्तमान अन्तरराष्ट्रीय मानको एवम् उचित प्रशासनिक उपायो का अनुसरण करके प्राप्त किया जाता है।

**खाईयां एवं टाईल्स छिद्र**

ठोस रेडियोसक्रिय अपशिष्ट का निपटान भूमिगत सुदृढ कन्क्रीट कक्ष में किया जाता है जिसे "खाईयां" कहते है। सभी अन्तरस्थानिक दरारों को प्राकृतिक आयन विनिमायक जैसे कि वर्मीकुलाइट एवं

बेन्टोनाइट से पश्च-भरण किया जाता है। पश्च-भरण के पश्चात इनको पहले से ही ढाले गये कन्क्रीट के लट्ठों (स्लॅब) द्वारा ढक दिया जाता है जो कि आवरण प्रदान करते है (चित्र-15)

चित्र-15:भंडारण खाईयां

अन्ततः निपटान कक्षों को पुर्णतया बन्द करने के लिए खाईयों का विशिष्ट जलरोधन उपचार किया जाता है। आपेक्षित रूप से उच्चसक्रिय ठोस अपशिष्ट गहरे वृत्ताकार भूमिगत कक्षो में रखे जाते है जिन्हें "टाईल्स" छिद्र के नाम से जाना जाता है(चित्र-1)

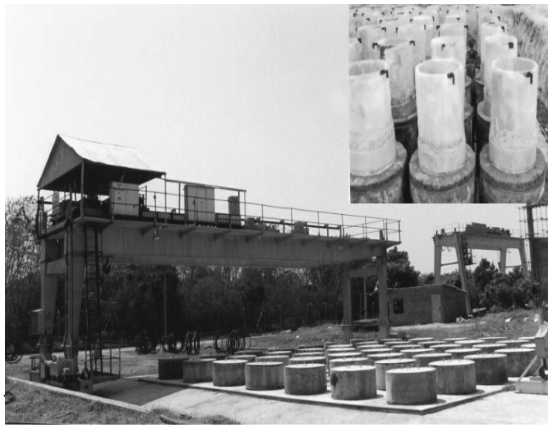

ये कक्ष चार-पांच मीटर गहरे स्टील पाईप होते हैं जिनमें कंक्रीट का स्तर होता है और बाहर से जलरोधक सतह होती है। इन टाईल्स छिद्रों में रखे गये अपशिष्ट को जब जरूरत हो तो पुनः प्राप्त किया जा सकता है। उच्च समग्रता वाली कंक्रीट कास्क जिसमें अन्दर से कार्बन स्टील का स्तर रहता है, नरोरा परमाणु बिजलीघर में प्रयोग किया गया है। अपशिष्ट को रखने के बाद इसे एक सम्पूर्ण संकुल बनाने के लिए कास्क के दो अर्द्धो की वेल्डिंग कर दी जाती है। खाईयां और टाईल्स छिद्र 2 से 5 मीटर की परिवर्ती गहराई पर स्थिर होते हैं और इसलिए इस प्रकार के निपटान तन्त्र को "समीपस्थ सतह निपटान सुविधा" के नाम से जाना जाता है। इसको भौम जल विज्ञान गुणों के साथ स्थल के विस्तृत विशेष गुण वर्णन के बाद अभिकल्पित कर बनाया जाता है। सुरक्षित प्रचालन की सुविधा के लिए सुदूर प्रचालित विशेष पदार्थ प्रहस्तन उपकरण, स्थानांतरण वाहन, कवचीय पात्र और डि-कास्किंग उपकरण का प्रयोग किया जाता है।

**उच्च स्तरीय रेडियोसक्रिय अपशिष्ट का अन्तरिम भंडारण**

ठोसीकृत उच्च स्तरीय रेडियोसक्रिय अपशिष्ट उच्च ऊष्मा क्षय सम्बंधित होता है। इसलिए यह आवश्यक है कि इन अपशिष्टों का भन्डारण एक अन्तरिम काल के लिए स्थल पर शीतल करने की सुविधा के साथ किया जाये (चित्र-17)

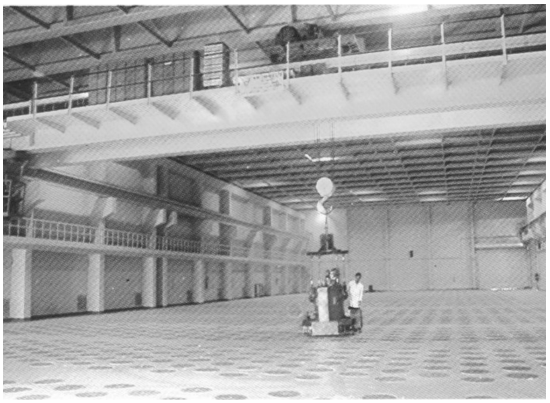

चित्र-17: अन्तरिम भन्डारण सुविधा, तारापुर अन्तरिम

अन्तरिम भन्डारण का काल 25 से 30 वर्षो का अनुमानित होता है, जिस समय में क्षय ऊष्मा मूल मात्रा की लगभग आधी हो जायेगी। क्षय ऊष्मा को हटाने के लिए अन्तरिम भन्डारण अत्यावश्यक है। अन्तरिम भन्डारण सुविधा के अभिकल्पन के लिए विभिन्न पद्धतियों को परखने के बाद भारत में प्राकृकि सम्वहन वायु शीतलित कक्ष का चुनाव किया गया है। यह क्षय ऊष्मा का उपयोग करता है और एक उपयुक्त अभिकल्पित लम्बी चिमनी होती है जो कि भन्डारण कक्ष से गुजरने वाली हवा के गमन के लिए चालक बल प्रदान करती है। तन्त्र स्वत: नियमित होता है और ऊष्मा भार या मौसम की दशाओ में परिवर्तन के लिए क्षतिपूर्ति कर सकता है।

**उच्च स्तरीय रेडियोसक्रिय अपशिष्ट का निपटान**

ठोसीकृत उच्च स्तरीय रेडियोसक्रिय अपशिष्ट के प्रबंन्धन में अन्तिम पद भूमिगत गहरा भूवैज्ञानिक निपटारन है। इस संदर्भ में मुख्य दृष्टिकोण इस तरह के अपशिष्ट में दीर्घजीवी एक्टिनाइडस की उपस्थिति है। बहुत से देशो में, जिसमें भारत भी शामिल है, उपयुक्त गहरे शैल समूह मे ठोसीकृत उच्च स्तरीय अपशिष्ट के निपटारन के लिए अध्ययन किया जा रहा है, जो मानवीय वातावरण से अपशिष्ट को लम्बे समय तक पृथक रखने की क्षमता प्रदान करते हैं। उपलब्ध आकडों के अध्ययन पुष्टि करते हैं कि इस प्रकार के शैल समूह लाखों वर्षो तक भौतिक एवं रासायनिक स्थिरता बनाये रखते हैं।

पिछले एक दशक से समांग एवम् ठोस ग्रेनाईट में अपशिष्ट निक्षेपागार के लिए अतिक्षेप शैल की विशिष्ट लक्षणों की खोज का एक कार्यक्रम चल रहा है। बहु-रोकथाम तन्त्र (मल्टिवैरियर) के साथ विशेष रूप से बनाये गये भूमिगत कक्षों में ठोसीकृत उच्चस्तरीय रेडियोसक्रिय अपशिष्ट को रखने के लिए एक 500 से 600 मीटर की गहराई पर विचार किया गया है। सुदूर उपकरणों का प्रयोग अपशिष्ट को रखने के बाद कक्षों का प्राकृतिक मृत्तिका एवं खनिज का उपयोग करके पश्च-भरण कर दिया जायेगा। यह रेडियोन्यूक्लाइड की गति को रोक या बन्द करने की क्षमता रखता है। निपटान तन्त्र की सुरक्षा के आंकलन करने के लिए विभिन्न गणितीय नमूने विकसित किये जा रहे हैं। नाभिकीय बिजली कार्यक्रमों से सम्बंधित बहुत निम्न अपशिष्ट आयतन के मद्देनजर कुछ दशकों बाद गहरे निक्षेपागार की आवश्यकता होगी। हमारे वैज्ञानिक इस क्षेत्र में आधुनिकतम तकनीक के विकास से परिचित हैं।

**स्थल चयन एवम् निगरानी**

समीपस्थ सतह अपशिष्ट निक्षेपागार के स्थल चयन एवम् अभिकल्पना में भौमजल एवम् मृदा के विशिष्ट लक्षण, अपशिष्ट रखने के लिए भूमिगत एवम् भूमि के ऊपर अभियांत्रिक ढॉचों का विकास, अपशिष्ट उत्पाद के संकुलन के लिए प्रयोग होने वाले पदार्थो का मूल्यांकन शामिल है। इन अध्ययनों के परिणाम का उपयोग एक इच्छित काल के लिए अपशिष्ट में उपस्थित रेडियोन्युक्लाइड को अपने में रखनेवाले निपटान तन्त्र के प्रभाव के मूल्यांकन करने मे होता है। इसे उचित सुरक्षा मूल्यांकन विधियों का प्रयोग करके गणितीय आदर्श प्रतिमानों की सहायता से किया जाता है।

बड़ी संख्या में प्रचालकों को ध्यान में रखते हुए और लम्बे अरसे तक उपयोग करने के मद्दे नजर, सुरक्षा मूल्यांकन आदर्श प्रतिमान जटिल होते हैं और संगणक का उपयोग करके उनके समाधान की जरूरत होती है। एक निपटान सुविधा की स्थापना के लिए एक दिये हुए चयन स्थल के सुरक्षा मूल्यांकन के परिणामोंके आधार पर निपटान इकाई के प्रकार का चुनाव किया जाता है। पूर्ण रूप से निपटान तन्त्र के किसी भी वस्तु के बाहर न आने देने की क्षमता को बढ़ाने के लिए उपयुक्त पश्च-भरण पदार्थो का उपयोग किया जाता है। संरोधन के कार्य करने की योग्यता को अपशिष्ट निपटान तन्त्र से विभिन्न दूराअध: प्रवाह दिशा पर स्थापित अन्तरर्निमित

मानीटरिंग वेध-कुओं से भौन जल के नियमित नमूनों द्वारा मॉनीटर किया जाता है।

**अनुसंधान एवम् विकास**

भारतीय अपशिष्ट प्रबन्धन की मजबूत नींव तैयार करने के लिए साठ के शुरूआती दशक में अनुसन्धान एवम् विकास कार्य शुरू हो गया था। अनुसन्धान एवं विकास के प्रारम्भिक प्रयास आयातन अपचयन और अपशिष्ट निम्नीकरण, उपचार प्रक्रम, विभिन्न मैट्रिक्स में निश्चलीकरण और ठोसीकृत अपशिष्ट उत्पादों के विशिष्ट लक्षणों की और निर्देशित थे। अपने रेडियो रसायन संरचना पर निर्भर करते हुए अपशिष्ट के विभिन्न प्रकारों के लिए अलग-अलग तरह की मैट्रिक्स का विकास किया गया जैसे कि सीमेन्ट, बहुलक (पोलियर) एवम् कांच।

मैट्रिक्स संरचना के आखिर चुनाव से पहले निश्चलीकृत अपशिष्ट उत्पादों के गुणों का विस्तृत अध्ययन किया जाता है जैसे कि रासायनिक स्थायित्वता, समांगता, यांत्रिक क्षमता और विकिरण स्थायित्वता। इन अनुसन्धान एवं विकास कार्यो के लिए विशेष उपकरण प्रयोगशाला में लगायें गये हैं जो कि रेडियोसक्रिय नमूनों का हस्तन एवम् बनाने के लिए काम आते हैं।

प्रयोगशाला पैमाने पर विकसित प्रक्रमों और उत्पादों का आगे विभिन्न और अभियांत्रिक प्रचालनों के अध्ययन एवं संभाव्यता को स्थापित करने के लिए पाइलट संयंत्र पैमाने पर परीक्षण किया जाता है। यह मरम्मत एवम् बदलने विसंदूषण एवं विसंयोजन के परीक्षण में साथ ही संयंत्र तन्त्र के प्रचालन एवं अनुरक्षण कर्मचारीगणों के प्रशिक्षण में भी सहायता करता हैं। अपशिष्ट संयंत्रों के प्रचालन एवं सुविधा के लिए द्रव, ठोस या गैसीय रूप में रेडियोसक्रिय अपशिष्ट के प्रहस्तन के लिए विशिष्ट उपकरण और गॅझट की जरूरत होती हैं। इन उपकरणों के विकास के लिए बहुत ज्यादा प्रयास किये गये है, जिनमें उच्च दक्षता निस्यन्दक दूरस्थ विधि से बदलने वाले टयूब बंडल के साथ ताप सायफन वाष्पक, प्रेरण ऊष्मा धात्विक गलक, दूरस्थ वेल्डिंग केन्द्र द्रव प्रतिदर्शी समायोजन, दूतस्थ पाइप संयोजक, कवच स्थानांतरण कास्क, परिचालक आदि है।

**मानव संसाधन विकास**

पिछले चार दशकों के दौरान परमाणु उर्जा विभाग ने अपशिष्ट प्रबंन्धन तन्त्र के अभिकल्पन, विकास संरचना एवम् प्रचालन के क्षेत्र में विशेषज्ञता का पालन पोषण एवम् विकास किया है। इन कार्यो में लगे हुए लोगों को भूमंडलीय विकासों के साथ कदम मिलाने के लिए प्रशिक्षित एवम् पुनः प्रशिक्षित किया जाता है। प्रशिक्षिण सभी स्तरों पर दिया जाता है। उदाहरण के लिए अभिकल्पन एवम् विकास में विज्ञान एवम् अभियांत्रिकी में स्नातकों एवम् स्नातकोत्तरों को प्रशिक्षित किया जाता है। इसी तरह डिप्लोमा धारकों को अभियांत्रिकी निर्माण में, प्रचालन एवम् अनुरक्षण में और तकनीशियनों को संविरचन में, उपकरणों के प्रचालन एवं अनुरक्षण में, अपशिष्ट प्रबंन्धन सुविधाओं में प्रयोग होने वाले समायोजनों में प्रशिक्षण दिया जाता है। प्रशिक्षिण कार्यक्रम में कक्षा भाषण एवम् हैण्डस ऑन प्रशिक्षिण दोनों का समावेश होता है। भारत में अंतर प्रशिक्षिण के लिए विकसित बुनियादी संरचना का उपयोग अन्तराष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेन्सी के तत्वाधान में दूसरे देशों के प्रशिक्षुओं को रेडियोसक्रिय अपशिष्ट के सभी पहलुओं पर इसी तरह का प्रशिक्षण दिया जाता है। भारतीय व्यावसायिक निपुणता वाले व्यक्ति अन्तरराष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेन्सी के साथ विभिन्न क्षमताओं में रेडियोसक्रिय प्रबंन्धन में विशेषज्ञ के रूप में नियमित सेवा प्रदान करते हैं। देश में विकसित मानव संसाधनों की गहराई और लम्बे अनुभव के मद्देनजर, भारत रेडियोसक्रिय अपशिष्ट के क्षेत्र में एक विकसित देश समझा जाता है।

## निष्कर्ष

भारत विश्व में बहुत ही कम देशों में एक है, जो रेडियोसक्रियता के अधिकांश भाग के पुनर्चक्रण पर जोर देने के साथ सुरक्षित रेडियोसक्रिय अपशिष्ट प्रबन्धन में व्यापक सामर्थ्य रखता है। अनुसन्धान एवम् विकास कार्य निपटान की आवश्यकता वाले अपशिष्ट का न्यूनीकरण एवं आर्थिक प्राप्ति के साथ अधिकतम पुनर्चक्रण के रास्ते पर गौर करने के लिए आगे भी कार्य जारी है। रेडियोसक्रिय किस्मों के चुने हुए पार्थक्य, दीर्घ जीवी एक्टिनाइडस का विभाजन एवम् तत्वांतरण, बहुत कम उत्पन्न होने वालें एक्टिनाइडस के साथ ईधन चक्र में थोरियम का उपयोग इत्यादी के क्षेत्र में विकास इस दिशा में किए जाने वाले प्रयासों के कुछ उदाहरण हैं।

भारत के पास आज चिकित्सा केन्द्रों, अनुसन्धान प्रयोगशालाओं और उद्योगों से निकलने वाले भुक्त विकिरण स्त्रोतों के निपटान एवम् परिणामी रेडियोसक्रिय अपशिष्ट धाराओं के प्रबंन्धन से संबंधित विभिन्न नाभिकीय सुविधाओं के प्रचालन के क्षेत्र में 50 वर्षो सें अधिक का अनुभव है। साथ ही, विभिन्न प्रकार के गैसीय द्रव एवम् ठोस रेडियोसक्रिय अपशिष्टों के निस्सरण निपटान की मॉनीटरिंग तथा नियंत्रण हेतु एक सुव्यवस्थित नियामक प्रणाली स्थापित है। इसके अलावा प्रत्येक नाभिकीय विद्युत संयंत्र में उसमें प्रचालन कार्य शुरू होने के बहुत पहले एक पर्यावरण संरक्षण प्रयोगशाला स्थापित की जाती है। ये प्रयोगशालायें नियमित रूप से आसपास के पर्यावरण से मिट्टी, पानी, हवा वनस्पति एवम् खाद्य पदार्थो के नमूनों का विश्लेषण करती हैं। इन नमूनों के विश्लेषण से प्राप्त परिणामों से यह प्रदर्शित होता है कि हमारे नाभिकीय विद्युत संयंत्रों के प्रचालन तथा इन सुविधाओं से उत्पन्न होने वाला रेडियोसक्रिय निस्सरण नगण्य है।


## अभिस्वीकृतियॉ

इस लेख मे प्रस्तुत कार्यो को सम्पन्न करने मे परमाणु उर्जा विभाग के अपशिष्ट प्रबंन्धन से जुडे व्यक्तियों ने अथक परिश्रम एवम् लगन से निरंतर प्रयास किये हैं। लेखक इन सभी के योगदान को सहृदय अभिस्वीकृत करता है। साथ ही इस लेख के अनुवाद एवम् टंकण के लिये श्री. म. भि. यादव और श्री. गणेश मिश्रा का योगदान सराहनीय है।

**परिचय :**

श्री कंवर राज भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आयआयटी) रूड़की से रासायनिक अभियान्त्रकी के स्नातक है तथा भाभा परमाणु अनुसन्धान केन्द्र में वर्ष 1973 से सेवारत है। वर्तमान में आप, भाभा परमाणु अनुसन्धान केन्द्र के अपशिष्ट प्रबन्धन प्रभाग के अध्यक्ष है। परमाणु उर्जा विभाग के ट्रॉम्बे तथा कलपक्कम स्थित संयंत्रों के अपशिष्ट प्रबंन्धन का दायित्व श्री राज के विभाग पर है। इसके अतिरिक्त, समस्त देश के चिकित्सा उद्योंगो एवम् अनुसन्धान सन्स्थाओं मे जानित भुक्त शेष विकरण स्रोतो का निपटान कार्य भी इनका विभाग देखता है। श्री राज ने राष्ट्रीय एवम् अन्तरराष्ट्रीय पत्रिकांओं मे 80 से अधिक रिसर्च लेख प्रकाशित किये है। आप 6 वर्षो तक अन्तरराष्ट्रीय परमाणु उर्जा ऐजन्सी (आयएईए) की अपशिष्ट मानक समिति के भारत के प्रतिनिधि रह चुके है। भारतीय परमाणु उर्जा नियामक बोर्ड (अेईआरबी) के विभिन्न मानकों के समीक्षा एवम् लेखन से आप जुड़ें है।

# नाभिकीय प्रौद्योगिकी का कृषि के क्षेत्र में उपयोग

एस. एफ. डिसुजा
जैव चिकित्सा वर्ग, सहनिदेशक एवं अध्यक्ष नाभिकीय कृषि एवं जैव प्रौद्योगिकी प्रभाग
भाभा परमाणु अनुसंधान केंन्द्र, मुम्बई - 400 085. ट्रॉम्बे
email :stanfdsouza@gmail.com

विकिरण एवं रेडियो समस्थानिकों का कृषिक्षेत्र में फसलों की उन्नत प्रजातियों, कीट एवं बीमारियों की रोकथाम के लिये, कीटनाशी अवशेष की मृदा एवं पौधो में मात्रा का निर्धारण करने के लिये, उर्वरकों की उपयोग क्षमता का निर्धारण करने तथा कृषि उत्पादों के संरक्षण में किया जाता है। विकिरण एवं रेडियो समस्थानिकों का कृषि के क्षेत्र में प्रयोग, नाभिकीय ऊर्जा का शांतिपूर्ण समाज हित में व विशेष महत्वपूर्ण उपयोग है तथा भा.प.अ.कें. ने इसको विकसित करने में उल्लेखनीय योगदान दिया है। विकिरण प्रौद्योगिकी का एक महत्वपूर्ण योगदान फसलों की नयी एवं उन्नत म्यूटेंट किस्मों का विकास करने में है। अभी तक भा.प.अ.के में इस प्रक्रिया द्वारा फसलों की 39 नयी किस्मों का विकास किया जा चुका है। ये सभी किस्में कृषि मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा व्यवसायिक रूप से कृषि के लिये नामांकित की गयी है। ये प्रजातियाँ मुख्य रूप से उच्च उत्पादकता गुणवत्ता, शीघ्र पकने वाली एवं जैविक एवं अजैविक तनाव प्रतिरोधी है। ये सभी प्रजातियाँ किसानों द्वारा अपनायी गयी है और काफी पसंद की गयी हैं।

प्रस्तावना :

हरित क्रांति ने भारत को एक खाद्यान्न आयात करने वाले देश से खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बना दिया। निरंतर औद्योगिकीकरण के बावजूद भारत की अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से कृषि पर आधारित है एवं भारत की 50% से अधिक जनसंख्या मुख्य रूप से कृषि एवं संबंधित व्यवसाय से जुड़ी हुयी है। अगले 20 वर्षो में भारत की जनसंख्या 1.4 बिलियन हो जायेगी जिसके लिये 60-70 मिलियन अतिरिक्त खाद्यान्न की आवश्यकता होगी। घटती हुयी भूमि एवं जल के साधन और पर्यावरण की सुरक्षा देखते हुये कृषि उत्पादकता को बढ़ाना महत्वपूर्ण हो गया है। इस दिशा में फसलों की अधिक उत्पादकता, जैविक एवं अजैविक तनाव अवरोधी प्रजातियों का विकास एवं कटाई उपरांत कृषि उत्पादों का नुकसान रोकना महत्वपूर्ण है। परमाणु ऊर्जा विभाग ने नाभिकीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिक के क्षेत्र में सतत् अनुसंधान, विकास एवं प्रसार की गतिविधियों से कृषि उत्पादकता को बढ़ाने एवं कृषि उत्पादों के संरक्षण में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। विकिरण एवं रेडियो समस्थानिकों का उपयोग कृषि अनुसंधान की समस्त विधाओं जैसे-फसलों का आनुवांशिक उत्परिवर्तन द्वारा नयी किस्मों या प्रजातियों का विकास, कीटों एवं बीमारियों का प्रबंधन, मृदा एवं पौधों में कीटनाशी अवशेषों का विश्लेषण, उर्वरकों की उपयोग क्षमता एवं कृषि उत्पादों के संरक्षण में किया गया हैं। विकिरण एवं रेडियों समस्थानिकों का कृषि क्षेत्र में अनुप्रयोग, परमाणु ऊर्जा का समाज के लाभ के लिये एक महत्वपूर्ण शांतिपूर्ण प्रयोग है। विकिरण प्रौद्योगिकी का उपयोग करके भा.प.अ.के. का फसलों की उत्पादकता बढ़ाने, फसलों की संरक्षा एवं पादप पोषण तथा खाद्य उत्पादों की संरक्षा में किये गये कार्य निम्न लिखित है।

## फसलों की नयी प्रजातियाँ या किस्में विकसित करने में विकिरण प्रौद्योगिकी का अनुप्रयोग :

कृषि उत्पादकता बढ़ाने के लिये उन्नत किस्मों का विकास मुख्य रूप से चुनाव एवं संकरण द्वारा किया जाता है। एक पादप प्रजनक के लिये, फसलों की आनुवांशिक विभिन्नता एक महत्वपूर्ण स्रोत है, जिससे वह फसलों के महत्वपूर्ण गुणों का चुनाव करके फसलों की उन्नत प्रजातियों का विकास कर सकता है। Nature में Variability सतत् उत्परिवर्तन द्वारा बहुत ही कम आवृत्ति ($10^{-6}$) पर पैदा होती है। इस Variability की आवृत्ति को रासायनिक या भौतिक उत्परिवर्तक का प्रयोग करके बढ़ाया ($10^{-3}$) जा सकता है। सतत् या प्रेरक उत्परिवर्तन फसलों में आनुवांशिक विभिन्नता (Variability) पैदा करने का महत्वपूर्ण स्रोत है। प्रेरक उत्परिवर्तन द्वारा फसलों के एक या एक से अधिक आर्थिक गुणों का विकास किया जा सकता है। प्रेरक उत्परिवर्तन का फसलों के सुधार कार्यक्रम में महत्वपूर्ण योगदान है। फसलों का उत्परिवर्तन (Mutation) विभिन्न विकिरण स्रोतों जैसे- गामा किरणें ($^{60}Co$, $^{137}Cs$) X- किरणे, बीटा कण, न्यूट्रान द्वारा किया जा सकता है। इन सभी में गामाकिरणें उपयोग में सरलता एवं भेदन क्षमता के कारण मुख्य रूप से उपयोग की जाती है। भा.प.अ.के. में फसलों का सुधार मुख्य रुप से induced mutagenesis एवं परंपरागत breeding (recombination & breeding) के संयोग से तिलहनी फसलें groundlnut, musterd, soybean and sunflower) दलहनी फसलें (उड़द, मूँग, तुअर एवं चवली), अन्नवाली फसले (धान्य एवं गेंहू) एवं Vegetatively propagated पौधे जेसे केला एवं गन्ने के लिये किया जाता है। Induced Mutation के क्षेत्र में लगातार प्रयास द्वारा तिलहतो तथा दलहती फसलों के 500 से अधिक Mutant तैयार
किये गये हैं। इन म्यूटेटों को भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR) एवं कृषि विश्वविद्यालयों के सहयोग से विभिन्न agro-climatic zones में मूल्यांकित किया जा रहा है। भा.प.अ.के. द्वारा Mution एवं recombination breeding के संयोग से विभिन्न फसलों की । 39 नयी किस्मों का विकास किया गया है। ये सभी किस्मे कृषि मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा व्यवसायिक (खेती cultivation) के लिये नामांकित की गयी है। इन किस्मों में तिलहनों की 20 (14- मूँगफली 3- सरसों, 2- सोयाबीन, 1- सूरजमुखी) दलहनों की 17 (8- मूँग, 4- उड़द, 4- तुअर, 1- चावली) एवं धान एवं जूट की एक-एक किस्मे है। (सारणी 1) (1-3) ये प्रजातियॉ उच्च उत्पादकता, उच्चगुणवत्ता, शीघ्र पकने वाली, कीट एवं बीमारी अवरोधी, उच्च Harvest-index, semi-draft habit एवं अजैविक तनाव अवरोधी है। कुछ नवीन गुणों के आधार पर मूँगफली, Sesame, सूरजमुखी एवं sesbania rostrata के ट्राँबे म्यूटेंटो को National Bearer of Plant Genetic Resources (NBPGR), New Delhi द्वारा पंजीकृत किया गया है। भा.प.अ.के. द्वारा विकसित की गयी फसलों की ट्रॉम्बे म्यूटेंटे प्रजातियाँ किसानों के बीच में काफी पसंद की गयी है। ये प्रजातियाँ देश के विभिन्न भागों में किसानों द्वारा सफलता पूर्वक उगायी जा रही है। ट्राँबे की दलहनी फसलों की प्रजातियॉ मध्य एवं दक्षिण भारत में उच्च उत्पादकता एवं बीमारी अवरोधी किस्मों के रूप में काफी प्रचलित है। उड़द की TAU-1 प्रजाति महाराष्ट्र के 5 लाख हेक्टेयर से भी ज्यादा क्षेत्र में उगायी जा रही है। TAU-1 के breeder Seed की प्रतिवर्ष सबसे अधिक माँग होती है और Maharashtra State Seed Corporation, Akola और National Seed Corporation, Pune के अनुसार अभी तक TAU-1 का 21013 मैट्रिक टन प्रमाणित बीज किसानों को वितरित किया जा चुका है। मूँग की फसलों में मुख्य रूप से Yellow mosaic Vires एवं Powdery mildew बीमारी की समस्या

पायी जाती है। भा.प.अ.के. द्वारा विकसित मूँग की TARM-1, TARM-2 एवं TARM-18 किस्में इन रोगों की प्रतिरोधी किस्में होने के साथ-2 उच्च उत्पादकता वाली है और भारत में पहली बार विकसित की गयी है। TARM-1 किस्म की फसल के रूप में तथा Rice fallow के लिये उड़ीसा राज्य में काफी प्रचलित है। TMB-37 मूँग की शीघ्र पकने वाली (55-59 days तथा Yellow mosaic Vires अवरोधी किस्में हैं तथा मुख्य रूप से म.प.बिहार, पश्चिमी बंगाल तथा आसाम राज्यों में उगायी जा रही हैं। TJM-3 प्रजाति तीन बीमारीयों Powder mildew, Yellow mosaic Vires एवं Rhigoctonic root rat रोग अवरोधी किस्म है। यह किस्स जवाहर लाल नहेरु कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर के सहयोग से तैयार की गयी है मूँग की TM-96-2, Rice fallow में उगायी जाने वाली भारत में विकसित की गयी पहली किस्म है। यह किस्म आध्रप्रदेश के Rice fallow में करीब 40,000 हेक्टेयार क्षेत्र में उगायी जा रही है। अभी हाल में ही मूंग की TM-2000-2 (Pairy mung) प्रजाति इंदिरा गाँधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर के सहयोग से विकसित की गयी है। भा.प.अ.के. में विकसित की गयी मूँग की किस्में देश के 3,00,000 हेक्टेयार क्षेत्र में उगायी जा रही है। भा.प.अ.के. द्वारा विकसित तुअर की TT401 एवं TJ T-501 किस्में महाराष्ट्र, म.प्र., छत्तीसगढ़ एवं गुजरात राज्यों में काफी प्रचलित है। चावली की TRC-774 (खल्लेश्वरी) किस्म छत्तीसगढ़ राज्य में धान आधारित फसल प्रणाली का प्रमुख हिस्सा है। भा.प.अ.के. द्वारा मूँगफली की उन्नत प्रजातियाँ किसानों के बीच काफी प्रसिद्ध है और सारे देश में उच्च उत्पादकता, शीघ्र पकने वाली, अच्छी पानी उपयोग क्षमता (3-5) वाली किस्मों के रूप में उगायी जा रही है। कुछ प्रजातियाँ 20-30 दिनों के लिये fresh seeds dormancy दिखाती है, जिससे अगर फसल की कटाई के समय बारिश हो जाए तो फसलों के बीज कटाई के पहले अंकुरित नही होते है। भा.प.अ.के. द्वारा विकसित की गयी मूँगफली की TAG-24, TG-26, TG-37 A, TG-38, TG-51 के बीज सामान्य श्रेणी में आते हैं। जबकि TKG-19 A, सोमनाथ TPG-41, TLG-45 प्रजातियाँ बड़े बीजों की श्रेणी मे आती हैं। ये सारी प्रजातियाँ मूँगफली उगाने वाले राज्यों जैसे गुजरात, आन्ध्रप्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, उड़ीसा एवं राज्यस्थान में काफी प्रचलित है। इसके अलावा ये प्रजातियाँ अन्य राज्यों जैसे पश्चिम बंगाल, पंजाब, तामिनाडू, मध्यप्रदेश उत्तर प्रदेश एवं गोवा मे भी प्रचलित हो रही है। TAG-24 प्रजाति काफी प्रचलित प्रजाति है और National breeder seed indent में इसका प्रमुख स्थान है इस प्रजाति को नेशनल चेक के रूप में प्रयोग किया जाता है। भा.प.अ.के. द्वारा विकसित मूँगफली की समस्त प्रजातियाँ के 100% आनुवांशिक शुद्धता वाले न्यूक्लिस बीजों को गोरीबिंदुर स्थित NABTD के फार्म में उगाया जाता है। मूँगफली के प्रजनक बीजों को बड़ी संख्या में विभिन्न राष्ट्रीय संस्थान, कृषि विश्वविद्यालयों, प्रगतिशील किसानों के सहयोग से उगाया जाता है। ये बीज गुजरात, कर्नाटक, म.प्र., महाराष्ट्र, उड़ीसा और पश्चिम बंगाल के कृषि विश्वविद्यालयों NGOs, राष्ट्रीय एवं प्रादेशिक बीज निगम, राजकीय प्रक्षेठा निगम को Multiply करने के लिए उपलब्ध कराये गये है। कर्नाटक राज्य में TAG-24 एवं TPG-41 को विकसित करने के लिए ' बीज गौबो '
का विकास किया गया है। इन विकसित प्रजातियों का प्रयोग करके किसानों को 7 टन/हेक्टेयर तक की पैदावर मिली है जिससे किसानों को रू. 50000/- हेक्टेयर तक का फायदा हुआ है। राजस्थान राज्य के रेगस्तानी क्षेत्रों में सूखा अवरोधी TG-37 A एवं शीघ्र पकने वाली TBG 39 किस्मों की सफलता पूर्वक खेती की जा रही है। हाल में ही रिलिज होने वाली बड़े बीज वाली TBG (TDG)39, TPG 41 एवं TLG 45 किस्मों से किसानों के साथ-2 व्यापारियों एवं निर्यातकों को भी काफी फायदा हुआ है। मूँगफली अनुंसाधन निदेशालय एवं ICAR Comples for

के संयुक्त शोध से पता चला है कि TKG-19A प्रजाति, अल्यूमीनियम विषाक्तता वाली है जो कि अम्लीय मृदाओं मे पायी जाती है तथा अच्छी तरह उगती है। पूर्वात्तर राज्यों में इस प्रजाति के बीज बड़ी संख्या में उपलब्ध कराये गये। अन्य तिलहनी फसलों के अन्तर्गत सोयाबीन की किस्में TAMS-38 एवं TAMS-98-21महाराष्ट्र के विदर्भ क्षेत्रों के किसानों के बीच में काफी प्रचलित हो रही है और महाराष्ट्र के करीब 150,000 हेक्टेयर क्षेत्र में उगायी जा रही है। पीली सरसों की TPM-1 उच्च तथा सूरज मुखी की TAS-2 उच्च बीज एवं तेल उत्पादकता वाली किस्में है जो महाराष्ट्र में उगाने के लिये नामांकित की गयी है।

**रेडियो समस्थानिकों का मृदा विज्ञान, पादप पोषण में अनुप्रयोग एवं कीट नाशी अवशेष एवं अन्य कृषि रसायने का मृदा एवं पादप में विश्लेषण**। रेडियो समस्थानिकों को मृदा-पादप तंत्र में पोषक तत्वों के स्थानांतरण का अध्ययन करने के लिये ट्रेसर के रूप में प्रयोग किया जाता है। ये रेडियो ट्रेसर की उपस्थितिका पता उनकी रेडियो सक्रियता को विभिन्न प्रकार के संसूचको द्वारा लगाया जाता है। विभिन्न प्रकार के उर्वरकों को उनके रेडियो समस्थानिकों द्वारा लेबल करके फसल के लिये उनकी इष्टतम मात्रा का निर्धारण, उर्वरकों को इस्तेमाल करने का सही समय, मृदा में उनका ह्रास, मृदा से फसल में स्थानांतरण आदि का सही तरीके से पता लगाया जा सकता है। मृदा विज्ञान के क्षेत्र में मुख्य रूप से $^{32}P$, $^{35}S$, $^{59}Fe$, $^{65}Zu$, $^{54}Mu$ आदि रेडियो समस्थानिकों का प्रयोग किया जाता है। एक फास्फोरस (Patent No. 2 38485, 2010) एवं एक जिंक (Patent No. 2 39929, 2010) जैव उर्वरक का पेंटेट प्राप्त किया गया है इन उर्वरकों को $^{32}P$, एवं $^{65}Zu$, का प्रयोग करके मूल्यांकित किया गया है (6,7) फसलों को कीड़े एवं बीमारियों से बचाने के लिये कीटनाशी एवं अल्प कृषि रसायनों का प्रयोग किया जाता है। इन रसायनों का पर्यावरण में स्थांतरण एवं अपघटन के बारे में जानकारी $^{14}C$-labeled कृषि रसायनों द्वारा प्राप्त की जा सकती है। विकिरण एवं आइसोटोप प्रौद्योगिकी बोर्ड (BRIT)$^{14}C$, $^{35}S$, $^{3}H$ एवं $^{32}P$ labeled कृषि रसायनों
एवं उर्वरको का निर्माण कर रहा है जो मृदा एवं उर्वरक के क्षेत्र में अनुसंधान के लिये काफी लाभप्रद है।

**कीट एवं बीमारियों के प्रबंधन में विकिरण तकनीके**
विकिरण का उपयोग करके बन्ध्य कीट तकनीक (SIT) का प्रयोग कीटों के नियंत्रण के लिये किया जाता है। (2) इस तकनीक में कीड़ो को प्रयोगशाला में पाला जाता है और फिर उन्हे (विशेष रूप से नर कीटों को) विकिरण की सहायता से बन्ध्य (Sterile) कर दिया जाता है। जिससे वे बच्चे पैदा करने में असर्मथ हो जाते हैं। इन बन्ध्य कीटों को वातावरण में छोड़ा जाता है जिससे इनकी प्राकृतिक जनसेवा मे कमी होती है और अंत में बगैर किसी कीटिनाशी का प्रयोग किये बिना कीटों का पूर्व रूप से नियंत्रण हो जाता है और वे फसलों को नुकसान नहीं पहुँचा पाते हैं। भा.प.अ.के. द्वारा इस तकनीक का प्रयोग करके red Palm Weevil, Potato toter Moth एवं Spotted bollworm of Cotton का पूर्व नियंत्रण किया गया है।

**विकिरण प्रौद्योगिकी का खाद्य एवं कृषि उत्पादों के प्रसंस्करण में प्रयोग**
खाद्य विकिरणीकरण प्रौद्योगिकी का प्रयोग करके हम खाद्य का नुकसान रोक सकते है। साथ ही खाद्य संरक्षा एवं अर्न्तराष्ट्रीय बाजार में अपने कृषि एवं खाद्य उत्पादों को पहुँचा सकते है। विकिरण द्वारा खाद्य संरक्षण में हम गामा किरणों, X - किरणो एवं तीव्र गामी इलेक्ट्रानों की ऊर्जा का नियंत्रित रूप से प्रयोग करके खाद्य एवं कृषि उत्पादों का संरक्षण

करते हैं। यह प्रौद्योगिक खतरनाक प्रतिबंधित रसायनिक धूमृक जो मानव स्वास्थ्य एवं पर्यावरण के लिए के हानिकारक है, के एक स्वस्थ विकल्प के रुप में प्रयोग कर सकते हैं। कम मात्रा मे विकिरण का प्रयोग करके आलू एवं प्याज के भंडारण के समय में होने वाले अंकुरण को रोक सकते है तथा भंडारित दालों एवं अनाजों में लगने वाले कीड़े एवं बीमारीयों का नियंत्रण कर सकते हैं। इस तकनीकी का प्रयोग करके कटाई के उपरांत होनेवाले फसल के नुकसान को रोका जा सकता है तथा कृषि उत्पादों का लंबे समय तक भंडारण भी किया जा सकता है। विकिरण की मध्यम मात्रा में प्रयोग करके खाद्य जनित बीमारी फैलाने वाले सूक्ष्म जीवों का भी नियंत्रण किया जा सकता है। विकिरण प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल करके Quarantine barrier को तोड़कर कृषि उत्पादों का निर्यात भी किया जा सकता है।

निष्कर्ष :

हमारा अनुभव बताता है कि फसलों की उन्नत किस्मों का विकास करने में विकिरण तकनीकी एक पूरक तकनीक के रूप में पारम्परिक पादप प्रजनक तकनीक के साथ प्रयोग किया जा सकता है। यह साफ है कि नाभिकीय प्रौद्योगिकी ने किसानों, व्यापारियों एवं इस तकनीक के प्रयोग करने वाले लोगों को लाभ पहुँचाया है और यह प्रौद्योगिकी खाद्य एवं राष्ट्रीय सुरक्षा प्रदान करने में महत्वपूर्ण सिद्ध हुयी है।

तालिका 1: कृषि मंत्रालय भारत सरकार द्वारा जारी और व्यावसायिक खेती के लिए अधिसूचित ट्राँम्बे फसल किस्में :-

| फसल किस्म | जारी वर्ष | राज्य | विशेष लक्षण |
|---|---|---|---|
| **मूंगफली** | | | |
| TDG 39 / TBG 39 | 2009/2008 | कर्नाटक, राजस्थान | बड़े बीज, मध्यम परिपक्वता, उच्च Oleic एसिड, शाखाओं की अधिक संख्या |
| TG 51 | 2008 | उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, असम, उत्तर पूर्वी राज्य | शीघ्र परिपक्वता, मध्यम बड़े बीज, उच्च छीलन प्रतिशय, अधिक 3- बीज युक्त फली |
| TLG 45 | 2007 | महाराष्ट्र | बड़े बीज, मध्यम परिपक्वता |
| TG 38 | 2006 | उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, असम, उत्तर पूर्वी राज्य | उच्च छीलन प्रतिशत, अधिक 3- बीज युक्त फली, अधिक गोल बीज, तना सड़ांध के लिए सहनशीलता |
| TPG 41 | 2004 | पूरा भारत | बड़े बीज, मध्यम परिपक्वता, उच्च Oleic एसिड, 20 दिन बीज निद्रा |
| TG 37A | 2004 | हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, गुजरात, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, असम, उत्तर पूर्वी राज्य | उच्च पैदावार, चिकनी फली, व्यापक अनुकूलता, कॉलर सड़ांध और सूखे के लिए सहनशीलता |
| TG 26 | 1996 | गुजरात, उत्तर महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश | सामान्य समय से पहले, उच्च उपज सूचकांक, चिकनी फली 20 दिन बीज निद्रा, लवणता के लिए सहनशीलता |
| TKG 19A | 1996 | महाराष्ट्र | बड़े बीज, 30 दिन बीज निद्रा |
| TG 22 | 1994 | बिहार | मध्यम बड़े बीज, 50 दिन बीज निद्रा |
| TAG 24 | 1992 | महाराष्ट्र, उड़ीसा, कर्नाटक, राजस्थान, पश्चिम बंगाल | अर्ध-बौना, सामान्य समय से पहले, उच्च पैदावार, व्यापक अनुकूलता, उच्च विभाजन प्रतिशत |
| सोमनाथ (TGS 1) | 1991 | गुजरात | बड़े बीज, अर्द्ध-धावक प्रकार |
| TG 3 | 1987 | केरल | शाखाओं की कम संख्या |
| TG 17 | 1985 | महाराष्ट्र | द्वितीयक शाखाएं नहीं, 30 दिन बीज निद्रा |

| | | | |
|---|---|---|---|
| TG 1 | 1973 | महाराष्ट्र | बड़े बीज, उच्च पैदावार, शाखाओं की अधिक 50 दिन बीज निद्रा |
| **सूरजमुखी** | | | |
| TAS-82 | 2007 | महाराष्ट्र | काला बीज कोट, सूखे के लिए सहनशीलता |
| **सोयाबीन** | | | |
| TAMS-98-21 | 2007 | महाराष्ट्र | उच्च पैदावार, जीवाणुज pustules, *Myrothecium* पत्ती चिहन, सोयाबीन मोजेक वायरस रोगों के लिए प्रतिरोधी |
| TAMS-38 | 2005 | महाराष्ट्र | शीघ्र परिपक्वता, जीवाणुज pustules, *Myrothecium* पत्ती चिहन, के लिए प्रतिरोधी |
| **सरसों** | | | |
| TPM-1 | 2007 | महाराष्ट्र | पीले बीज |
| TM-2 | 1987 | असम | Powdery फफूंदी के लिए प्रतिरोधी, निकटसंयुक्त फली |
| TM-4 | 1987 | असम | पीले बीज |
| **मूंग (हरा चना)** | | | |
| TM 2000-2 | 2010 | छत्तीसगढ़ | चावल परती भूमि के लिये उपयुक्त Powdery फफूंदी के लिए प्रतिरोधी |
| TM-96-2 (ट्राँम्बे पसारा) | 2007 | आंध्र प्रदेश (रबी और ग्रीष्म), चावल परती भूमि | Powdery फफूंदी और *Corynespora* पत्ती चिहन, के लिए प्रतिरोधी |
| TJM-3 | 2007 | मध्य प्रदेश | Powdery फफूंदी, पीले मोजेक वायरस और *Rhizoctonia* रूट संड़ाध रोगों के लिए प्रतिरोधी |
| TMB-37 | 2005 | पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड, पश्चिम बंगाल, असम | पीले मोजेक वायरस के लिए प्रतिरोधी |
| TARM-18 | 1995 | महाराष्ट्र | Powdery फफूंदी के लिए प्रतिरोधी |

| | | | |
|---|---|---|---|
| TARM-1 | 1995 | महाराष्ट्र, गुजरात, मध्य प्रदेश, आंध्र प्रदेश, केरल, कर्नाटक उड़ीसा, तामिलनाडु | Powdery फफूंदी के लिए प्रतिरोधी |
| TARM-2 | 1992 | महाराष्ट्र | Powdery फफूंदी के लिए प्रतिरोधी |
| TAP-7 | 1993 | महाराष्ट्र, कर्नाटक | Powdery फफूंदी के लिए सहनशीलता |
| **अरहर** | | | |
| TJT-501 | 2009 | मध्य प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़ | उच्च पैदावार, शीघ्र परिपक्वता, *Phytophtora blight* के लिए सहनशीलता |
| TT-401 | 2007 | मध्य प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़ | उच्च पैदावार, फली छिद्रक और फली मक्खी की वजन से नुकसान के लिए सहनशीलता |
| TAT-10 | 1985 | महाराष्ट्र | शीघ्र परिपक्वता |
| TT-6 | 1983 | मध्य प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक, केरल, आंध्र प्रदेश | बड़े बीज |
| **उड़द (काला चना)** | | | |
| TU 94-2 | 1999 | आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, केरल, तामिळनाडु | पीले मोजेक वायरस के लिए प्रतिरोधी |
| TAU-2 | 1992 | महाराष्ट्र | उच्च पैदावार |
| TAU-4 | 1992 | महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश | बड़े बीज |
| TAU-1 | 1985 | महाराष्ट्र | बड़े बीज |
| **लोबिया** | | | |
| TRC-77-4 (खल्लेश्वरी) | 2007 | छत्तीसगढ़ (रबी) | चावल आधारित फसल प्रणाली के लिए उपयुक्त |
| **चावल** | | | |
| हरि | 1988 | महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश | पतला प्रकार का अनाज |
| **जूट** | | | |
| TKJ-40 | 1983 | महाराष्ट्र | उच्च पैदावार |

संक्षिप्ताक्षर: A: अकोला, AM: अमरावता, B: बीकानेर, D: धारवाड़, G: मूंगफली, J: जवाहर, K: कोंकण, A: केंद्रपाड़ा, L: लातूर, M: मूंग/ सरसों, MB: मूंगबीन, P: फुले/ Phaseolus (TAP-7), R: रायपुर, R: resistant (प्रतिरोधी) (TARM-18)/ रबी (TARM-1,2), S: सोयाबीन/ सूरजमुखी (Sunflower), T: ट्रॉम्बे, T: तूर, U: उड़द.

सराहना: मैं अपने सभी प्रभागीय सहयोगियों को धन्यवाद देता हूँ जिनके कार्य की इस लेख में चर्चा की गई है. मै डा. मनोज श्रीवास्तव को इस लेख के हिन्दी रुपान्तरण हेतु विशेष धन्यवाद देता हूँ।

**भा.प.अ.कें. के प्रशिक्षण विद्यालय**

डॉ. एस. एफ. डिसुजा ने भा.प.अ.कें. के प्रशिक्षण विद्यालय (ट्रेनिंग स्कूल) के 15 वे बैच से स्नातक होने के बाद BARC से जुड़े/इस समय वे उत्कृट वैज्ञानिक/सह निदेशक जैव चिकित्सा वर्ग एवं अध्यक्ष, नाभिकीय कृषि एवं जैव प्रौद्योगिकी प्रभाग के पद कार्यरत है। उनके नेतृत्व में फसलों की 17 उन्नत प्रजातियों का विकास किया गया और उन्हें व्यावसायिक कृषि उत्पादन के लिए प्राध्यापक तथा रासायनिक प्रौद्योगिकी संस्थान, मुंबई में भी adjunct प्राध्यापक है। इन्होने जीव रसायन, में Ph. D. की है तथा उनके अनुंसधान वे प्रमुख क्षेत्र पादप जीव रसायन, इंजाइम, माइक्रोबियल एवं पादप प्रौद्योगिकी है एवं मुख्य रुप से जैवप्रसंस्करण, बायोसेंसर एवं बायोरेमेडियसन के क्षेत्र के अनुसंधान मे भी जुडे हुये। उनके 150 से अधिक रिसर्च आर्टिकल अंतरराष्ट्रीय जनरल्स में प्रकाशित है और उन्होंने 20 से अधिक Ph. D. छात्रों को Guide किया है। उनके Microbiology के क्षेत्र में उत्कृष्ट एवं प्रशासनीय कार्यो के लिए उन्हे Louis Pasture Award से सम्मानित किया गया है। उन्हे DAE के Group पुरस्कार से 2007 एवं 2009 के लिये सम्मानित किया गया है। वे कई वैज्ञानिक एवं शक्षाणिक संस्थानें के के लो है।

# परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम एवं विकिरण संरक्षा

डॉ. डी. एन. शर्मा
सहनिदेशक, स्वास्थ्य, संरक्षा एवं पर्यावरण वर्ग
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुम्बई - 400 085.

1. प्रस्तावना :

भारत का परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम, जिसकी नींव टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान (TIFR) की स्थापना के साथ 1945 में डाली गयी थी, आज एक पूर्णतः परिपक्व एवं आत्मनिर्भर बन गया है। हमारा परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम आज न केवल शान्ति और संपन्नता को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। अपितु देश की बढ़ती ऊर्जा जरुरतों को पूरा करने में, विज्ञान एवं तकनीकी क्षेत्र के विकास में तथा समाज के समग्र विकास में आज सक्रियता से कार्य कर रहा है।

2. परमाणु ऊर्जा

परमाणु ऊर्जा नियंत्रित परमाणु विखंडन अभिक्रिया से परमाणु भट्टी (रिएक्टर) में उत्पन्न की जाती है। इस प्रक्रिया में यूरेनियम ईंधन की तरह प्रयोग में आता हैं। यूरेनियम के एक परमाणु के विखंडन से उत्पन्न ऊर्जा-कोयले, तेल अथवा गैस के परमाणु से उत्पन्न ऊर्जा से कोई गुना अधिक होती है। इसका अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि यूरेनियम के 25 ग्राम से उत्पन्न ऊर्जा के बराबर ऊर्जा प्राप्त करने के लिये हमें लगभग 100 टन कोयले की जरुरत पड़ेगी। विखंडन से उत्पन्न ऊर्जा से पानी को वाष्प में परिवर्तित किया जाता है तथा इस वाष्प से टरबाइन घुमाकर विद्युत पैदा की जाती है। आज दुनिया में लगभग 15% बिजली परमाणु ऊर्जा से ही उत्पन्न की जा रही है। यद्यपि परमाणु रिएक्टरों की प्रारम्भिक लागत अधिक होती है, परन्तु बिजली उत्पादन की लागत अन्य स्रोतों से काफी किफायती है। यही कारण है कि आज पूरा विश्व ऊर्जा की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिये परमाणु ऊर्जा की ओर उम्मीद भरी नजर से देख रहा है।

3. **भारत का परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम**

हमने अपने परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम को तीन चरणों में बाँटा है।

3.1 पहले चरण में हमने दाबित भारी पानी एवं प्राकृतिक यूरेनियम वाले रिएक्टरों के निर्माण एवं संचालन में पूर्णतः सक्षमता प्राप्त कर ली है और आज 20 परमाणु ऊर्जा रिएक्टरों का देश में सफलता पूर्वक संचालन तथा 6 नवीन रिएक्टरों का निर्माण हो रहा है। हमारा प्रथम चरण अब पूरी तरह व्यवसायिक स्तर पर चल रहा है।

3.2 कार्यक्रम का द्वितीय चरण, जो 'द्रुत अभिजनक रिएक्टर' (FBR) जिनमें प्लूटोनियम पर आधारित ईंधन का उपयोग होता है, अब व्यवसायिक स्तर पर पहुँचने के कगार है।

3.3 तीसरी चरण एवं उससे जुड़ी तकनीकी, जिसमें हमारे देश में प्रचुर मात्रा में पाये जाने वाले थोरियम का ईंधन के रूप में उपयोग होना है, अब काफी विकसित हो चुकी है। हम शीघ्र ही परमाणु ऊर्जा के इस तीसरे चरण में प्रविष्ट होंगे। हमें पूर्ण विश्वास है कि इस चरण के द्वारा हमारे देश में आने वाली कई शताब्दियों तक ऊर्जा की माँग काफी हद तक पूरी की जा सकेगी।

4. **विकिरण संरक्षा**

परमाणु ऊर्जा के संचालन में पैदा होने वाले विकिरणों से कर्मचारियों एवं आस-पास की जनता को पूर्णतः सुरक्षित रखने के लिए विश्व स्तर के मापदण्डों का अनपालन किया जाता है। इसके अतिरिक्त भारत सरकार ने एक स्वतन्त्र इकाई 'परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद' (AERB) का गठन किया है जो परमाणु रिएक्टरों एवं उनसे जुड़ी हर इकाई की पूरी प्रक्रिया (जैसे जगह का चंयन, निर्माण, प्रचालन अनुरक्षण आदि) पर कड़ी नजर रखता है। इसको अतिरिक्त हर एक परमाणु ऊर्जा संस्थान परिसर एवं आस-पास के पर्यावरण पर नजर रखने के लिए एक ' पर्यावरणीय सर्वेक्षण प्रयोगशाला ' (ESL) ' शुरु से ही कार्यरत रहती है। परमाणु बिजलीघरों में तथा उससे संबंधित दूसरी इकाइयों में विकिरण से संबंधित हर कार्य स्वयंचलित प्रणाली से किया जाता है। विकिरण से बचने के लिए प्रथमतः तीन सूत्र ' समय, दूरी एवं आवरण (shielding)' का प्रयोग किया जाता है। विकिरण देने वाले कण शरीर में प्रविष्ट न हो, इसके लिए कार्यरत कर्मचारियों को श्वसन यंत्र (Respirator) एवं विशेष तरह के सूट दिए जाते है। हर कर्मचारी को विकिरण डोज मापने के लिए TLD/DRD दिए जाते है। हर कर्मचारी को किसी विशेष कार्य को करने से पहले अच्छी तरह उसका अभ्यास कराया जाता है। परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र संरक्षा परिषद ने कर्मचारियों एवं साधारण जनता को मिलने वाले विकिरण मात्रा की सीमा तय की हुई है जो विकिरण उस मात्रा से जिसके अपर कोई प्रभाव हो सकता है, से बहुत कम है। सभी को इसके प्रति जागरुक भी कराया जाता है। हर इकाई में एक 'विकिरण सुरक्षा अधिकारी' (RSO) होता है, जिसकी यह जिम्मेदारी होती है कि किसी भी कर्मचारी को नियामक व संरक्षा परिषद द्वारा निश्चित की गयी सीमा से अधिक विकिरण डोज न मिले एवं यह डोज जितना संभव हो कम से कम (ALARA) ही रहे।

5. रेडियोधर्मी समस्थानिक

परमाणु रिएक्टर में प्रयोग के पश्चात ईंधन एवं कई अन्य धातुओं, रेडियोधर्मी समस्थानिकों (Radioisotopes) में परिवर्तित हो जाते है। इस तरह परिवर्तित हुए रेडियोधर्मी समस्थानिक सामाजिक परिप्रेक्ष में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। खाद्य एवं कृषि, मानव स्वास्थ्य सेवाएँ, नगरीय एवं ग्रामीण अपशिष्ट (Waste) प्रबंधन, जल प्रबंधन, पर्यावरण संरक्षण आदि अनेक ऐसे क्षेत्र है जिनमें इन समस्थानिकों ने अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान दिया है। बोर्ड ऑफ रेडिएशन एण्ड आइसोटोप टेक्नोलोजी (BRIT), जो परमाणु ऊर्जा विभाग की एक इकाई है, सामाजिक परिप्रेक्ष्य में रेडियो समस्थानिकों की उपयोगिता को एक दिशा प्रदान करती है।

6. **रेडियोधर्मी समस्थानिकों का बहुआयामी उपयोग**

6.1 कृषि क्षेत्र में :

कृषि क्षेत्र में समस्थानिकों का उपयोग जनुकीय उत्परिवर्तन (genetic mutation) द्वारा बीजों एवं पौधों की नई किस्म के निर्माण के लिए किया जाता है । कि स्तंभ भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र ने इस विकिरण प्रौद्योगिक के अनुप्रयोग से दालों, मूंगफली, चावल, राई एवं जूट के बीजों की 23 नई किस्में विकसित की हैं, जिससे इनकी पैदावर बढ़ी है। महाराष्ट्र एवं अन्य प्रान्तों के किसान इन बीजों को प्रयोग कर लाभान्वित हुए है। कृषि क्षेत्र में उर्वरकों की कार्यविधि का अध्ययन करने के लिए भी समस्थानिकों का उपयोग किया जाता है। इससे सभी उर्वरकों का विभिन्न पौधों के लिए चुनाव करने में सहायता मिलती है।

6.2 खाद्य पदार्थों का संरक्षण:

विश्व में खाद्य एवं भोज्य पदार्थों के संरक्षण में समस्थानिकों से निकलने वाले विकिरण (गामा किरणों) सब्जियों, फलों अन्य भोज्य पदार्थ एवं

विभिन्न मसालों में पड़ने वाले अनेक प्रकार के जीवाणुओं का नाश कर देते हैं, जिससे उनको काफी लंबे समय तक भंडारों में रखा जा सकता है। इससे न केवल खाद्यन्नों की बरबादी कम होती है बल्कि खाद्य पदार्थों की स्वच्छता में भी वृद्धि होती है, जिससे उनका निर्यात आसानी से किया जा सकता है। इस तरह के विकिरण प्रसंस्करण संयंत्र भारत के विभिन्न प्रान्तों में बडी तेजी से फैल रहे है।

6.3 मानव स्वास्थ्य सेवाएँ :

रेडियो समस्थानिकों ने कैंसर के निदान एवं उपचार में काफी लंबे समय से अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान दिया है। कैंसर के रोगियों की कर्क रोग से ग्रसित ग्रंथियों के उपचार के लिए दूर उपचार मशीन (Teletherapy) का जिसमें कोबाल्ट-60 (Co-60) का प्रयोग होता है, भारतीय चिकित्सालयों में काफी समय से उपयोग हो रहा है। भा.प.अ. केन्द्र ने ऐसी ही मशीन, भाभाट्रॉन, का विकास किया है, जो लगभग 15 संस्थानों में पूर्ण सफलता के साथ उपयोग में लायी जा रही है। भारतीय परमाणु ऊर्जा विभाग की अन्य इकाईयों जैसे, RRCAT, में ऐसी त्वरीत मशीनों (Accelerator) का विकास हुआ है जो Co-60 से भी अधिक ऊर्जा वाली विकिरणों का सृजन करती है जिनके द्वारा शरीर के काफी अंदर कर्क रोग से ग्रसित ग्रंथियों का उपचार संभव है। रेडियोफार्मास्युटिकल्स जिसमें रेडियो समस्थानिकों का उपयोग होता है, आजकल विभिन्न प्रकार के रोगों के निदान एवं इलाज के लिए प्रयोग किया जाता है। इनके प्रयोग से बिना किसी चीर फाड़ के शरीर के आन्तरिक अवयवों जैसे अस्थि, यकृत (liver), मस्तिष्क (Brain), हृदय आदि के अचल व चल छाया चित्र देखे जा सकते है, जिनसे रोगों के निदान में बहुत सहायता मिलती है। ब्रिट (BRIT) में नियमित रूप से निर्मित फार्मास्युटिकल्स का न केवल भारत के नाभकीय औषधि केन्द्रों (NMC) में उपयोग हो रहा है बल्कि पडोसी देशो की माँग को भी काफी हद तक पूरा किया जा रहा है। विभिन्न समस्थानिकों का विभिन्न रोगों के निदान एवं इलाज में उपयोग किया जाता है। $^{99}$m TC नाभकीय चिकित्सा पद्धति का प्रमुख रेडियो समस्थानिक है। इसके अतिरिक्त $^{123}$I, $^{131}$I, $^{111}$In, $^{127}$Xe, $^{133}$Xe, $^{201}$Te, $^{75}$Se, $^{67}$Ga आदि अनेक समस्थानिक एवं इनके विभिन्न रसायनिक सम्मिश्रण शरीर के विभिन्न अंगों एवं क्रियाओं के छायांकन में प्रयुक्त होते हैं। इसके कारण चिकित्सा जगत में एक क्रान्ति सी आ गयी है। मुंबई का टाटा स्मारक चिकित्सालय (TMH) एवं 'नवी मुंबई का कैंसर उपचार तथा अनुसंधान एवं शिक्षण का प्रगत केन्द्र (Advanced Centre for Treatment, Research and Education in Cancer (ACTREC)' भारतीय परमाणु ऊर्जा विभाग के ऐसे दो प्रमुख संस्थान है जो कैंसर ग्रस्त रोगियों को विश्वस्तर की उपचार सेवाएँ प्रदान कर रहे है।

भा.प.अ. केंद्र में पाली विनाइल अल्कोहोल (PVA) को विकिरण द्वारा त्रियक-बंधन (cross-linking) करके बनाया गया हायड्रोजेल काफी मात्रा में जल सोखने की क्षमता रखता है, इसलिए शरीर के किसी हिस्से के जल जाने या चोट लगने पर इसको एक मरहम पट्टी की तरह प्रयोग किया जाता है।

6.4. जल प्रबंधन :

समस्थानिकों का जल प्रबंधन के विभिन्न पहलुओं में जैसे,

6.4.1 भूजल का कृत्रिम पुनर्भरण (Recharging of ground water),

6.4.2 बंदरगाहों में सिल्ट सिंचन (Movement of Silt) का अध्ययन,

6.4.3 बांधों में रिसाव का पता लगाना

6.4.4 समुद्र जल का निर्लवणीकरण (Desalination) आदि में उपयोग किया जा रहा है जो दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है।

6.5. पर्यावरण संरक्षा :

पर्यावरण संरक्षा को ध्यान में रखते हुए परमाणु ऊर्जा विभाग की किसी भी इकाई में जनित नाभकीय अपशिष्ट को किसी भी भौतिक अवस्था में एक सुरक्षित मात्रा के अंदर ही पर्यावरण में निसरण किया जाता है। ऐसे अपशिष्ट जिसमें रेडियोधर्मी सक्रियता अधिक मात्रा में होती है, को कांचीय आव्यूहन (Vitrification) करके सुरक्षित भंडारण किया जाता है। शहर का ठोस कचरा, जो रोगाणुओं से ग्रस्त होता है, उसको Co-60 से निकलने वाली गामा किरणों से बहुत हद तक रोगाणु मुक्त करके एक सफल उर्वरक के रुप में प्रयोग किया जा रहा है। बडोदरा में स्थापित भा.प.अ. केन्द्र की SHRI (Sludge Hygienisation Research Irradiator) इकाई कई वर्षों से इस तकनीक का उपयोग कर रही है।

6.6. औद्योगिक क्षेत्र में :

औद्योगिक क्षेत्र में समस्थानिकों का उपयोग किसी पाइप में द्रव्यों की ऊंचाई मापना, पाइप लाइनों में रिसाव का पता लगाना, मशीनों की पिचकारी (Piston) और दाँवेदार पहिये (Gear) के क्षय (Wear & Tear) के अध्ययन के लिए, बड़े संयत्रों में त्रुटी पता करने (Radiography), तेल उत्पादन क्षेत्र में तेल के स्रातों का पता लगाना आदि अनेकों कार्यों में होता है।

इसके अतिरिक्त समस्थानिकों का मूलभूत अनुसंधानों में रसायनिक एवं जैविक क्रियाओं का अध्ययन करने में उपयोग किया जा रहा है।

उपसंहार :

यद्यपि ऊर्जा के अन्य स्रोत उपलब्ध है परंतु आज के सामाजिक परिप्रेक्ष्य में परमाणु ऊर्जा न केवल स्वच्छ, सुरक्षित, विश्वसनीय एवं सुसंगत (Competitive) ऊर्जा का स्रोत है बल्कि अनेक प्रकार से हमारे समाज के लिए एक वरदान साबित हो रही है। जरुरत केवल इसके विवेकपूर्ण उपयोग की है। यह जगजाहिर है कि परमाणु ऊर्जा का अविवेकपूर्ण उपयोग पूरी मानव सभ्यता के विनाश का कारण भी बन सकता है।

इसलिए यह आवश्यक है की हम हर प्रकार के परमाणु ईंधन, रेडियोधर्मी पदार्थों को किसी भी प्रकार से आतंकीयों व असामाजिक तत्वों से हमेशा दूर रखे। भा.प.अ. केन्द्र इस दिशा में बहुत सक्रिय भूमिका निभा रहा है। यदि हम परमाणु को पूर्णतया अपने नियंत्रण में करके उसका सदुपयोग करे तो समाज का शायद ही ऐसा कोई महत्वपूर्ण क्षेत्र हो जिसमें उसका उपयोग न किया जा सके। इससे यह कहा जा सकता है कि परमाणु ऊर्जा एवं उससे जनित रेडियोधर्मी समस्थानियों का उपयोग सामाजिक परिप्रेक्ष्य में वास्तव में बहुअयामी है।

# पर्यावरण मूल्यांकन एवं संरक्षण

**डॉ. (श्रीमती) जी. जी. पंडित**
पर्यावरण मूल्यांकन प्रभाग, भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र,
ट्राम्बे, मुंबई - **400 085**. ई. मेल. **ggp@barc.gov.in**

**प्रस्तावना**

औद्योगीकरण, ऊर्जा की बढ़ती हुई आवश्यकता तथा अन्तिम शताब्दी मे प्राकृतिक संसाधनों का प्रतिकूल दोहन पर्यावरण के लिए उत्तरदायी है जो कि मानव स्वास्थ्य तथा पर्यावरण के लिये एक गंभीर खतरा बन गया है। पर्यावरण प्रदूषण हमारे वातावरण में अवांछनीय परिवर्तन है, जो मुख्य रूप से मानवीय क्रियाकलापों के परिणाम स्वरूप उत्पन्न होते हैं। ये परिवर्तन मानव स्वास्थ्य को सीधा प्रभावित करते हैं उदाहरणत: श्वसन, पानी के प्रवाह से तथा कृषि एवं जैवीय उत्पादों से। वायु गुणवत्ता के प्रबंधन का आशय प्रदूषकों के उत्सर्जन पर नियन्त्रण से है। चाहे वह गतिमान प्रदुषक स्त्रोत हो या स्थिर, जिसमें उच्च ईंधन गुणवत्ता, परिपक्व प्रबंधन तथा चलित शहरीकरण भी सम्मिलित है। वायु प्रदूषण का आशय वायु मण्डल में अवांछनीय तत्वों की उपलब्धि से है। प्रदूषण का उद्‌भव प्राकृतिक या मानवकृत हो सकता है। वायु प्रदूषण जिसका कि आम जनता से सीधा संबंध है, एक बड़े वैज्ञानिक शोध का हिस्सा बन चुका है। यह मानव के स्वास्थ्य पर सीधा प्रभाव डालता है चाहे वह स्वास्थ्य की दृष्टि से हो या उसके संपत्ति से। आन्तरिक तथा बाह्य वायुमण्डलीय प्रदूषण पूरे जगत में करोड़ों लोगों के स्वास्थ्य को प्रभावित (रोग ग्रसित) कर कहा है तथा यह मुख्यत: श्वसन तन्त्र को प्रभावित करता है जिसमें कि दमा तथा अन्य श्वास रोग प्रमुख हैं। वायु प्रदूषकों में कार्बन मोनोआक्साइड, नाइट्रोजन आक्साइड, सल्फर डाइआक्साइड, हाइड्रोकार्बन तथा विविक्त कणीय द्रव्य मुख्य हैं।

विभिन्न उद्देश्यों हेतु जल की गुणवत्ता का संरक्षण जल के प्रबंधन को परिभाषित करता है। गन्दे (प्रदूषित) जल का पर्याप्त शुद्धिकरण आवश्यक है जो कि औद्योगिक एवं शहरी क्षेत्रों में प्रवाहित होता है। इसमें जल की गुणवत्ता से संबन्धित नियामक एवं प्रशासनिक नियमों का बन्धिकरण प्रदूषण नियंत्रण के नजरिये से आवश्यक है। पर्यावरण मूल्यांकन के वैश्लेषिक तकनीकों का महत्वपूर्ण योगदान है जो कि विद्युत रसायन, प्रकाशमिति इत्यादि प्रमुख सिद्धान्तों पर आधारित है। इस सन्दर्भ में वर्णलेखन तकनीकों का प्रयोग कार्बनिक प्रदूषकों के मूल्यांकन में किया जाता है। पर्यावरणीय मूल्यांकन से प्राप्त आंकड़े, प्रदूषण के स्त्रोतों का पता लगाने तथा उन्हें नियन्त्रित करने मे सहायक होते हैं।

**वायु गुणवत्ता मूल्यांकन**

वायु प्रदूषण का एक मुख्य कारण दहन तथा उससे संबंधित क्रियाकलाप है। जीवाश्म ईंधन जिनका व्यापक रूप से प्रयोग किया जाता है, सल्फर एवं नाइट्रोजन के आक्साइड उत्सर्जित करते हैं। जिस प्रकार पेट्रोलियम पदार्थों वाले कारखानों का चलन बढ़ रहा है, साथ वायुमण्डल मे हानिकारक कार्बनिक योगिकों की मात्रा में बढ़ोत्तरी हो रही है। औद्योगिक क्षेत्र मे कोयले के प्रयोग के बढ़ने से वायु-मण्डल में धुएं, विविक्त कण तथा सल्फर डाइआक्साइड की सान्द्रताओं में भी बढ़ोत्तरी हुई है। कोयले का मुख्य प्रयोग विद्युत उत्पादन तथा धातुओं के निष्कर्षण में किया जाता

है। कार्बनिक प्रदूषकों में पालीसायक्लिक एरोमैटिक हाइड्रोकार्बन, वाष्पशील कार्बनिक हाइड्रोकार्बन तथा कीटनाशक मुख्य हैं। वायु में जनित द्रव्य एकल प्रदूषक न होकर विभिन्न रसायनिक घटकों वाले प्रदूषकों से मिल कर बने होते हैं। ये मुख्यतः अकार्बनिक आयन, धात्विक योगिकों तथा अन्य विभिन्न प्रकार के रसायनों से बने होते हैं। कणीय द्रव्य प्राकृतिक तथा मानवीय क्रियाकलापों से उत्सर्जित होते हैं। इनके अचल स्त्रोत में तापीय बिजलीघर, धातु निष्कर्षण ईकाइयां तथा सीमेंन्ट के कारखाने प्रमुख हैं। विविक्त पदार्थ आकारों के आधार पर वर्गीकृत किये जाते है, जैसे के 10 माइक्रॉन से कम, 2.5 माइक्रॉन से कम तथा सारे आकारों को एक साथ ले कर। मुख्यतः 10 माइक्रॉन से छोटे आकारों के विविक्त पदार्थ स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होते हैं जब कि बड़े आकारों वाले पदार्थ दृश्यता में बाधा उत्पन्न करते हैं। विविक्त द्रव्य मुख्यतः श्वास के रोगियों के लिये हानिकारक हो सकते हैं, क्योंकि इनका सीधा प्रभाव श्वसन तंत्र से होता है। विविक्त पदार्थों से होने वाले हानिकारक प्रभावों का आंकलन इनके रासायनिक संघटकों की जांच से लगाया जाता सकता है।

**जल गुणवत्ता मूल्यांकन**

जैसे-पीने के पानी की समस्या वैश्विक रूप से उभर रही है, इस परिदृश्य मे पानी की शुध्दता एक विशेष चर्चा का विषय बन चुका है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के आकड़ों के अनुसार सालाना 50,00,000 लोगों की मृत्यु जलजनित बिमारियों से हो रही है। जिसमें नवजात शिशुओं की संख्या अधिक है। जल की गुणवत्ता का सीधा संबंध खाद्य पदार्थों के उत्पादन से भी होता है। विकासशील देशों मे जल गुणवत्ता में भिन्नता सामाजिक, आर्थिक तथा भौतिक कारकों तथा उस देश के विकास पर भी निर्भर करती है। देश केवल पानी की समस्या से ही नहीं अपितु इसके गुणवत्ता से भी परेशान है जल की गुणवत्ता समय के साथ भी बदलती रहती है। अतः यह आवश्यक है कि लगातार जल की गुणवत्ता का मूल्यांकन किया जाए। नदियाँ, झीलें तथा भूगर्भीय जल पीने के पानी के मुख्य स्त्रोत हैं। गंदे जल का प्रभाव न केवल देश के विकास पर होता है अपितु पड़ोसी राष्ट्रों पर भी पड़ता है।

**पर्यावरण नियमन**

वन एवं पर्यावरण मंत्रालय, भारत सरकार के अन्तर्गत केन्द्रीय तथा राज्य प्रदूषण नियन्त्रक परिषद का गठन किया गया है जिनका उत्तरदायित्व नियमों को क्रियान्वित करना है। पर्यावरण (संरक्षण) धारा, 1986 जल, वायु तथा अपशिष्टों के प्रबंधन को सुझाती है। यह कानून भोपाल गैस त्रासदी के बाद संसद मे पारित हुआ। इस धारा की उपसूची 9 में वर्णित है कि औद्योगिक कारखानों के लिए यह आवश्यक है कि वे किसी भी प्रकार के पर्यावरणीय प्रदूषण के निवारण हेतु उत्तरदायी होंगे चाहे वह किसी दुर्घटना से ही क्यों न हो। उपसूची 10 एवं 11 के अनुसार सरकारी अधिकारी जो कि केन्द्रीय सरकार से संबंधित हो वह औद्योगिक क्षेत्रों में प्रदूषण के मूल्यांकन हेतु जा सकते हैं तथा अपने अधिकार क्षेत्र से आवश्यक कार्यवाही कर सकते हैं।

**वायु गुणवत्ता मानक**

परिवेशी वायु गुणवत्ता मानक वायु प्रदूषकों हेतु एक कानूनी प्रतिबन्ध है जो इनकी सान्द्रताओं के पदों में व्यक्त की जाती हैं। वायु गुणवत्ता मूल्यांकन कार्यक्रम की आवश्यकता परिवेशी प्रदूषकों की मात्रा को मानक सान्द्रता सीमाओं से तुलना करने के लिए होती है।

**जल गुणवत्ता मानक**

पर्यावरण तथा वन मंत्रालय द्वारा औद्योगिक क्षेत्रों से अपशिष्ट जल के निवास हेतु 40 विभिन्न जल गुणवत्ता मानकों का निर्धारण किया गया है। यह निर्धारित मानक विभिन्न जलीय स्त्रोतों हेतु है जैसे कि सतह, समुद्र तटीय क्षेत्रों हेतु इत्यादि।

**वर्ण लेखन तकनीकों द्वारा प्रदूषकों का मूल्यांकन**

गैसीय वर्ण लेखनों तथा एच. पी. एल. सी. के विकास ने विषकारी कार्बनिक प्रदूषकों के पर्यावरण तथा भोजन में उपलब्धता की जाँच में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। वर्णलेखनों का मुख्य लाभ विशेष रूचि वाले प्रदूषक की जाँच करने में है। अतः यह एक अत्याधुनिक तकनीक है। यह तकनीक विभिन्न प्रकार के कार्बनिक प्रदूषकों जैसे वाष्पशील कार्बनिक यौगिक तथा उच्च क्वथनांक वाले पालिसायक्लिक ऐरोमैटिक हाइड्रोकार्बन के मापन में सक्षम है। कार्बनिक प्रदूषक वातावरण में प्राकृतिक तथा मानवीय क्रियाकलापों से उत्सर्जित होते हैं। औद्योगिक तथा कृषि तकनीकों में तेज विकास के साथ इनका उत्सर्जन भी बढ़ गया है। कार्बनिक प्रदूषक कैंसरजन्य होते हैं। बहुत सारे कार्बनिक प्रदूषक वातावरण में बहुत धीमी गति से अपघटित होते हैं इन्हें पी.ओ.पी. कहते हैं। इसमें कीटकनाशक मुख्य हैं जैसे कि. डी. डी. टी.।

**वायुमण्डल में प्रदूषक**

शहरी वातावरण में कार्बनिक प्रदूषकों की मात्रा इनके वाष्पदाब पर निर्भर करती है। कार्बनिक प्रदूषकों को निम्न प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है।

- वाष्पशील कार्बनिक यौगिक जैसे ईथीलीन, प्रोपीलीन, बेंजीन इत्यादि।
- मध्यम वाष्पशील कार्बनिक यौगिक जैसे क्लोरोकार्बनिक कीटकनाशक, हेक्साक्लोरोसायक्लोहेक्सेन, तथा पी. ए. एच.
- अवाष्पशील कार्बनिक पदार्थ मुख्यतः पी. ए. एच. जैसे कि बेंजो (ए) पायरीन.

**वायु मे वाष्पशील कार्बनिक योगिकों की जांच**

वाष्पशील कार्बनिक योगिकों (वी. ओ. सी.) के मुख्य स्त्रोत रासायनिक उद्योग, निष्कर्षण, वाष्पीकरण तथा वाहनों से निकलने वाला धुआं है। इन कार्बनिक योगिकों में से कुछ मानव स्वास्थ्य पर सीधा प्रभाव डालते हैं, जब कि कुछ अन्य हानिकारक यौगिकों को बनाने में सहायक होते हैं, जैसे कि एल्डीहाइड, ओजोन इत्यादि। वाष्पशील कार्बनिक यौगिकों का मूल्यांकन तथा इनका मानव स्वास्थ्य पर खतरे की गणना आवश्यक है, जो कैंसर जन्य होते हैं। इनके मापन हेतु नमूनों का क्रायोजनिक पूर्वसान्द्रण आवश्यक है। अन्ततः इनका मापन गैसीय वर्णलेखनों द्वारा किया जाता है, जिसमें दहन-आयनीकरण संवेदक के रूप में कार्य करता है।

**एच. पी. एल. सी. द्वारा विविक्त पदार्थों मे पी. ए. एच. की जाँच**

ईंधनों के अपूर्ण दहन से वायुमण्डल में पी. ए. एच. का आगमन होता है। इनके मुख्य शहरीय स्त्रोत कोयले से चलने वाले कारखाने, पेट्रोकैमिकल ईकाइयां तथा वाहनों से निकलने वाले अपशिष्ट हैं। घरों मे इनके प्रमुख स्त्रोत सिगरेट का धुआं तथा खाना बनाने में प्रयुक्त ईंधन है। पी. ए. एच. की वायुमण्डल में सान्द्रता का मूल्यांकन आवश्यक है क्योंकि इनके नाइट्रो व्युत्पन्न यौगिक कैंसर तथा वंशानुगत रोग पैदा करने में सहायक है। व्युतक्रम कला एच.पी.एल.सी. पराबैगनी संवेदक यौगिकों के पृथक्करण तथा जाँच हेतु काफी व्यापक तकनीक है।

**क्लोरो कार्बनिक कीटनाशकों का जी. सी. -ई. सी. डी. द्वारा मापन**

जैविक प्रणालियों के लिए क्लोरोकार्बनिक कीटनाशक बहुत हानिकारक होते हैं। क्योंकि ये मुख्यतः लिपिड में संग्रहित होते हैं तथा इनका अपघटन बहुत धीरे होता है। अतः क्लोरोकार्बनिक कीटकनाशक पी.ओ.पी. के मुख्य श्रेणियों मे आता है। यह पर्यावरण के हर हिस्से में पाया जाता है। मानव भी इससे अछूता नहीं है। यह एडीपोस के नमूनों यथा, दूध में तथा जलीय पारिस्थितकी में भी पाया जाता है। अब कीटनाशकों का प्रयोग लगभग पूरी दुनियाभर में बन्द हो चुका है। इनमें मुख्यतः डी.डी.टी. है। विवित्त कणों-इनका अध्ययन में जी.सी- ई. सी. डी. द्वारा किया जाता है।

**जलीय वातावरण में प्रदूषक**

**क्लोरो कार्बनिक कीटनाशकों की समुद्रतटीय परिस्थितकियों मे जाँच**

कीटकनाशकों का अपशिष्टकों का अपशिष्ट कृषि कार्यों के निष्पादन के बाद वायु मण्डल तथा नालों के माध्यम से अन्ततः सागर मे चला जाता है। अतः इन रसायनों का विभिन्न पर्यावरणीय सघटकों में वितरण तथा व्यवहार का पता लगना आवश्यक है। मछलियों में क्लोरोकार्बनिक कीटनाशकों के मिलने के बाद यह बात होती साबित है कि यह जलीय वातावरण को भी प्रभावित कर रहा है। समुद्र के नीचे की रेत तथा मछलियों के नमूनों में क्लोरो कार्बनिक प्रदूषकों की जाँच जी.सी.- ई. सी. डी. द्वारा की जाती है।

**भूगर्भीय जल में क्लोरोकार्बनिक कीटनाशकों के अवषेशों की जाँच**

इनका प्रयोग कृषि कार्यों में एवं मलेरिया के नियन्त्रण में किया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप जल, वायु तथा मृदा में प्रदूषकों की मात्रा में बढ़ोत्तरी हो रही है। इनके धीमे अपघटन तथा देर तक वातावरण में रहने के गुण से इनका प्रयोग बन्द होने के बावजूद भी ये पर्यावरण मे पाये जाते हैं।

**गुणवत्ता परीक्षण**

कार्बनिक प्रदूषकों की जाँच में प्रयुक्त विधियों की वैधता हेतु कृत्रिम मानक मिश्रणों का प्रयोग किया जाता है। जो कि आई. ए. ई. ए. द्वारा प्रदत्त होते है। पर्यावरणीय प्रदूषण को सीमित करने हेतु नाभिकीय ऊर्जा जैसे सुरक्षित एवं हरित ऊर्जा स्त्रोतों की आवश्यकता है। नाभिकीय ऊर्जा संयंत्र ही एकमात्र ऐसा ऊर्जा स्त्रोत है, जिसमें प्रदूषण फैलाने वाली गैसें नहीं निकलती तथा वातावरण प्रदूषित नहीं होता। अतः पर्यावरण प्रदूषण की दृष्टि से आज के संदर्भ मे नाभिकीय ईंधन एक अच्छा ऊर्जा स्त्रोत है।

**परिचय**


| | | |
|---|---|---|
| नाम एवं पदनाम | : | डॉ. (श्रीमती) जी. जी. पंडित<br>अध्यक्ष, पर्यावरण मापन एवं मूल्यांकन अनुभाग<br>पर्यावरण मूल्यांकन प्रभाग, भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र,<br>ट्रॉम्बे, मुंबई - ४०० ०८५. |
| शैक्षणिक योग्यता | : | पी.एच.डी. (रसायन शास्त्र) |
| विशेषज्ञता क्षेत्र | : | पर्यावरणीय प्रभाव जोखिम मूल्यांकन |


**कार्यों का संक्षिप्त विवरण**

डॉ. (श्रीमती) जी. जी. पंडित. की नियुक्ति भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र में 1981 में हुई। ये वर्तमान मे अध्यक्ष, पर्यावरणीय मापन एवं मूल्यांकन अनुभाग, पर्यावरणीय मूल्यांकन प्रभाग के पद पर कार्यरत है। रासायनिक एवं रेडियोधर्मी संदूषणों के पर्यावरणीय प्रभावों तथा जोखिम मूल्यांकन के कार्यों में संलग्न है। भारत में वैकल्पिक ऊर्जा स्त्रोतों के संदर्भ में भी इनका कार्य रहा है। इनका प्रमुख कार्य रेडियोधर्मी तथा रासायनिक प्रदूषकों के विभिन्न पर्यावरणीय भागों मे मूल्यांकन को समर्पित रहा है। इनका शोध एवं विकास कार्य पर्यावरण में रेडियोधर्मिता तथा प्रदूषकों के स्तर, प्रवाह तथा विस्तार पर प्रकाशित रहा है। प्रारंभ से इनका कार्य पर्यावरणीय मूल्यांकन के संदर्भ में नये तकनीकों तथा माध्यमों के विकास पर मुख्यत: रहा है, इनमे से प्रमुख कार्य विषकारी धातुओं, वाष्पशील कार्बनिक यौगिक, पालीसायक्लिक ऐरोमटिक हाइड्रोकार्बन, क्लोरोकार्बनिक कीटकनाशक तथा पालीक्लोरोनेटेड बाइ़फिनाएल के पर्यावरण के विभिन्न भागों में जाँच जोखिम गणना पर रहा है।

वर्तमान मे आई. ए. इ. ए. / आर. सी. ए. के प्रोजेक्ट '' एशिया क्षेत्रों में विविक्ति वायु प्रदूषण के स्त्रोतों तथा निरूपण'' के राष्ट्रीय संयोजक के रूप में भी कार्य कर रही हैं। परिवेशी विविक्ति पदार्थों का नाभिकीय वैश्लेषिक तकनीकों से निरूपण भी इस प्रोजेक्ट का भाग है। इन आकड़ों की सहायता से विविक्ति पदार्थों के स्त्रोतों तथा प्रभाजन का पता विभिन्न रिसेप्टर मोडुलों द्वारा किये जाते हैं। जो कि वायु में विविक्ति पदार्थों के जोखिम मूल्यांकन में प्रयोग किये जाते हैं। ये परास्नातक एवं पी. एच. डी. के छात्रों हेतु गाइड हैं, तथा विभिन्न समितियों की सदस्य-जैसे पर्यावरणीय प्रबंधन अनुभाग समिति, पर्यावरण संरक्षण एवं अपशिष्ट प्रबंधन अनुभाग समिति एवं ब्यूरो आफ़ इंडियन स्टैंडर्ड इन्होने 200 से अधिक शोध पत्र भी प्रकाशित किये हैं।

# भारत की ऊर्जा आत्मनिर्भरता में नाभिकीय ऊर्जा की भूमिका

स्वप्नेश कुमार मल्होत्रा , परमाणु ऊर्जा विभाग, मुंबई

मानव जाति ने अपने विकास के लम्बे इतिहास के दौरान अनेक महत्वपूर्ण पड़ाव तय किये हैं। इनमें सबसे अधिक महत्वपूर्ण पड़ाव था जब उसने दो पैरों पर खड़ा होना प्रारंभ किया । इसके साथ ही उसका क्षितीज काफी विस्तृत हो गया । वे अन्य प्राणियों की भांति मात्र भोजन ढूँढने वाले प्राणी न रहे और उनके जीवन का उद्देश्य नैसर्गिक जीवनयापन से ज्ञानात्मक अस्तित्व हो गया । इस विकास यात्रा में दूसरी महत्वपूर्ण घटना थी जब मानव ने अग्नि की खोज की । इसके साथ ही वे प्रौद्योगिकीविज्ञ बन गए और प्रौद्योगिकी के माध्यम से बाह्य ऊर्जा स्त्रोतों का दोहन अपने जीवन की गुणवत्ता के उत्थान के लिए करने लगे । तब से यह दौड़ आज तक जारी है। उनकी तब से आज तक की संपूर्ण यात्रा ऊर्जा के जीवश्म स्त्रोतों में भंडारित ऊर्जा के दोहन पर आधारीत रही है । परंतु अब समय आ गया है कि हम इस लीग से हटकर ऊर्जा के प्राथमिक स्त्रोतों की ओर चलना प्रारंभ करें । यह मानव का विवेकपूर्ण विकास की ओर शायद थोड़ा देर से उठाया हुआ ही सही, परंतु एक महत्वपूर्ण कदम होगा ।

हमारे देश को स्वतंत्रता मिले छः दशक बीत चुके हैं और 21वी सदी का पहला दशक भी अपनी समाप्ति के कगार पर है । आज भी हमारे सामने यह प्रश्न मुँह बाए खड़ा है कि कैसे हम अपने देश को पूर्ण रुपेण आत्मनिर्भर देश बनाएं । आत्म निर्भर होने के के लिए हमें इपने सभी नागरिकों के लिए खाद्य, आवास, प्राथमिक रक्षा, स्वच्छ एवं पर्याप्त जल, स्वच्छ पर्यावरण तथा उच्च स्तरीय स्वास्थ्य संरक्षण इन सभी क्षेत्रों में सुरक्षा सुनिश्चित करनी होगी । इन सभी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सस्ती, प्रचुर तथा विस्तृत ऊर्जा की उपलब्धता परम आवश्यक है।

जैसा सर्वविदित है, ऊर्जा मानव के विकास का मूल प्रेरक तत्व है । इस बात में कोई शंका नहीं है कि कुल राष्ट्रीय उत्पाद तथा औसतन अपेक्षित आयु का प्रति व्यक्ति ऊर्जा खपत से सीधा संबंध है । औद्योगिक उत्पाद, परिवहन, संचार, कृषि, शिक्षा, तथा स्वास्थ्य संरक्षण आदि के लिए ऊर्जा एक महत्वपूर्ण अवय होने के कारण किसी भी राष्ट्र के वास्तविक विकास के लिए मूलतः आवश्यक है। भारत की तीन चौथाई जनता गाँवों में रहती है और कुल जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा अब भी गरीबी की रेखा के नीचे है। हमारी ऊर्जा नीति ऐसी होनी चाहिए कि इन करोड़ों लोगों के जीवन की गुणवत्ता को बढ़ा कर उन्हें सामाजिक व आर्थिक रूप से सुदृढ़ बनाया जा सके।

भारतवर्ष प्राथमिक ऊर्जा खपत के मामले में विश्व में तृतीय स्थान पर है और कुल विद्युत उत्पादन के मामले में विश्व में संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन, जापान तथा रूस के बाद पाँचवा स्थान पर आता है । परंतु यदि हम प्रति व्यक्ति बिजली की खपत के आँकड़े देखे तो भारत का स्थान विश्व में बहुत नीचे चला जाता है । हमारे देश में प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष विद्युत उत्पादन की मात्रा 700 kWh है जो विश्व औसत (लगभग 3000 kWh) की तुलना में एक चौथाई तथा विकसित देशों की तुलना में लगभग 10 प्रतिशत है । यद्यपि हम विश्व के कई देशों की तरह विद्युत के विवेकपूर्ण उपभोग की सराहना नहीं करना चाहेंगे परंतु यह भी सत्य है कि यदि देश को हमें विकास के पथ पर और आगे बढ़ते देखना है तो हमें अपने विद्युत उत्पादन में कई गुना वृद्धि करनी होगी ।

इक्कीसवीं सदी के मध्य तक भारत में प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष विद्युत खपत को 5000 kWh तक पहुँचाना हमारा ध्येय है । इसके लिए हमें देश में कुल स्थापित विद्युत क्षमता को लगभग 12 गुना करना होगा जो अपने आप में एक भागीरथ प्रयास होगा ।

उस उद्देश्य की प्राप्ति हमें विवेक के साथ ऊर्जा मिश्र की रचना, विभिन्न ऊर्जा स्त्रोतों की उपलब्धता, प्रौद्योगिकी का स्तर, पर्यावरण का प्रभाव, आर्थिक प्रतिस्पर्धा तथा समाज के सभी वर्गों तक उसकी पहुँच आदि मुद्दों को ध्यान मे रख कर करनी होगी । यहाँ सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि हमारी भावी ऊर्जा नीति में पर्यावरण एक प्रमुख मुद्दा होना परम आवश्यक होगा ।

वर्तमान में हमारे देश में उपयोग में लायी जाने वाली ऊर्जा विभिन्न प्रकार की ऊर्जाओं का मिश्रण है । इसका एक बड़ा हिस्सा अव्यावसायिक सैक्टर है जिसके अंतर्गत लकड़ी, गोबर, कृषिजनित तथा साथ ही पशु एवं मनुष्य शक्ति आते हैं। व्यावसायिक सैक्टर का प्रतिनिधित्व जीवाश्म ईंधन करते हैं जिसके अंतर्गत कोयला, तेल तथा गैस आते हैं। इनके बाद नवीकरणीय स्त्रोतों का स्थान आता है जिसमें जल, सौर, पवन व ज्वारीय ऊर्जा निहित हैं । इसके साथ ही तेजी से विकसित होता नाभिकीय ऊर्जा कार्यक्रम है ।

**जीवाश्म ऊर्जा :**

5000 kWh प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष विद्युत खपत के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए हमारे ऊर्जा मिश्र के प्रत्येक अवयव की स्थापित क्षमता को तेजी से बढ़ना होगा । जीवाश्म ईंधन पर आधारित तापीय बिजलीघरों की कुल स्थापित क्षमता में अगले चार दशकों मे 5,00,000 MWe की वृद्धि करनी होगी । इसके लिए आवश्यक ईंधन की सीमित उपलब्धता के साथ-साथ इसका विश्व पर्यावरण पर पड़ने वाला दबाव अस्वीकार्य होगा । जीवाश्म ईंधन से चलने वाले तापीय बिजलीघर ग्रीन हाउस गैसों विशेषकर कार्बन डाई ऑक्साइड के उत्सर्जन के लिए मुख्यत: जिम्मेदार हैं । मात्र पिछली सदी में पर्यावरण में विभिन्न ग्रीनहाउस गैसों की मात्रा में 30% से 50% तक की वृद्धि हुई है । जैसा सर्वविदित है ये ग्रीनहाउस गैसें ग्लोबल वार्मिंग तथा समुद्र जल के स्तर में वृद्धि के लिए सीधे-सीधे जिम्मेदार हैं । यदि हमने भारत में विद्युत उत्पादन में वृद्धि की तो विश्व में कार्बन डाइ ऑक्साइड उत्सर्जन में भारत की भागीदारी वर्तमान में 5% से बढ़कर 45% तक बढ़ जाने की आशंका है और यह बढ़ोत्तरी मानव सभ्यता की निरंतरता पर ही प्रश्न चिन्ह लगा देगी ।

**नवीकरणीय (Reneqable) ऊर्जा स्त्रोत :**

भारत में जलविद्युत के माध्यम से मात्र 70-90 GWe की कुल स्थापित क्षमता संभव है । इसका अधिकांश भाग स्थापित किया जा चुका है । देश के पूर्वोत्तर क्षेत्रों में कुछ और जलविद्युत क्षमता स्थापित किए जाने की संभावना है । बृहत जलविद्युत परियोजनाओं का पारिस्थितिकी (ecology) तथा समाज पर प्रतिकूल प्रभाव चिंतनीय है ।

भारत में सौर प्रकाश की तीव्रता तथा वर्ष में धूप भरे दिनों की बड़ी संख्या को देखते हुए सौर ऊर्जा संभवत: ऊर्जा का सबसे आकर्षक, प्राकृतिक, प्राथमिक और संभावनाओं से भरा स्त्रोत है । पूरे विश्व में लगभग 35% की विकास दर से साथ यह ससे तेजी से विकसित होता ऊर्जा स्त्रोत है । इसकी सबसे बड़ी विशेषता है कि यह एक विस्तृत एवं विस्तारित स्त्रोत है और डीजल पंपों के विस्थापन, ग्रामीण क्षेत्रों के विद्युतीकरण तथा कृषि के क्षेत्र के लिए उपयोगी व आदर्श ऊर्जा स्त्रोत है । इसके अतिरिक्त हजारों वर्ग किलोमीटर में फैले थार रेगिस्तान में बड़ी क्षमता वाले विद्युत ग्रिड को विद्युत भरण करने वाले सौर बिजलीघरों की स्थापना संभव है । पर्यावरण की दृष्टि से भी यह अत्यधिक

स्वीकार्य स्त्रोत है । वर्तमान में देश में कुल ऊर्जा खपत में सौर ऊर्जा की भागीदारी मात्र 0.5 प्रतिशत है । इसका प्रमुख कारण फोटो-वोल्टीय विद्युत उत्पादन की अधिक कीमत और देश के अधिकतर भागों में उच्च जनसंख्या घनत्व है । तथापि सौर-तापीय-ऊर्जा विद्युत का स्वच्छ, विस्तृत तथा संभावनाओं से परिपूर्ण ऊर्जा स्त्रोत है।

पवन उर्जा एक और अपारंपारिक ऊर्जा स्त्रोत है जो काफी तेजी से विकसित हो रहा है । देश में इसकी कुल संभव स्थापित क्षमता 2000 MWe है जिसमें से लगभग आधी अब तक स्थापित की जा चुकी है । इसकी स्थापना के लिए गुजरात, महाराष्ट्र, राजस्थान तथा देश के पश्चिमी तटीय क्षेत्रों में उपयुक्त स्थानों का निर्धारण किया जा चुका है ।

**नाभिकीय ऊर्जा :**

नाभिकीय ऊर्जा एक ऐसा प्राथमिक ऊर्जा स्त्रोत है जिसमें विकास की अत्यधिक संभावना है और यह ग्रीन हाउस गैस प्रभाव मुक्त है । अतः भारत से संबंधित किसी भी ऊर्जा नीति में नाभिकीय ऊर्जा का अपना एक विशिष्ट स्थान है । यद्यपि हमारे यूरेनियम के ज्ञात स्त्रोत काफी कम हैं परंतु देश में थोरियम के प्रचुर भण्डार हैं । भारत का त्रिचरणीय नाभिकीय ऊर्जा कार्यक्रम इसी तथ्य पर आधारित है । प्रथम चरण के अंतर्गत स्वदेशी दाबित भारी पानी रिएक्टर आते हैं जिनमें प्राकृतिक यूरेनियम को ईंधन के रूप में तथा भारी पानी को मंदक व शीतलक के रूप में प्रयुक्त किया जाता है । कार्यक्रम के प्रारंभ में अमेरिका की जनरल इलैक्ट्रिक कंपनी द्वारा लगाए गए दो बॉयलिंग वाटर रिएक्टर (BWR) व अब तक स्थापित अठारह दाबित भारी पानी रिएक्टर परिचालन में है । दो दाबित भारी पानी रिएक्टर व रूस की मद्द से दो हल्का जल रिएक्टर (LWR) निर्माणाधीन हैं । देशज PHWR रिएक्टरों का डिजाइन समय के साथ विकसित हुआ है । कार्यक्रम के प्रारंभ में भारतीय विद्युत ग्रिड ध्यान में रखते हुए 220 MWe के रिएक्टर बनाए गए । तदनन्तर तारापुर में 540 MWe क्षमता वाले दो PHWR स्थापित किए गए । गुजरात के काकरापार में वर्तमान में निर्माणाधीन दो PHWR सहित भविष्य में निर्मित किए जाने वाले सभी PHWR 700 MWe क्षमता के होंगे ।

द्वितीय चरण के अंतर्गत फास्ट ब्रीडर रिएक्टर आते हैं जिसमें प्लूटोनियम का ईंधन के रूप में उपयोग होता है । यह प्लूटोनियम प्रथम चरण के रिक्टरों (PHWR, LWR) की भुक्तशेष ईंधन के पुनर्संसाधन से प्राप्त होता है । इन रिएक्टरों की विशेषता यह है कि इनमें जितना ईंधन खर्च होता है उससे अधिक का उत्पादन होता है । साथ ही प्लूटोनियम के विखण्डन में उच्च न्यूट्रॉन ईल्ड तथा न्यूट्रानों की उच्च ऊर्जा के कारण इनमें थोरियम का यूरेनियम 233 में परिवर्तन संभव होता है। कल्पक्कम स्थित फास्ट ब्रीडर टेस्ट रिएक्टर (FBTR) पिछले पच्चीस वर्षों से भी अधिक समय से स्वदेश में विकसित यूरेनियम-प्लूटोनियम कार्बाइड ईंधन का उपयोग कर परिचालन में है । 500 MWe क्षमता का पूर्णतः स्वदेशी प्रोटो टाइप फास्ट ब्रीडर रिएक्टर (PFBR) भी कल्पक्कम में निर्माणाधीन है । इस रिएक्टर में यूरेनियम-प्लूटोनियम मिश्रित ऑक्साइड ईंधन प्रयुक्त होगा । धात्विक ईंधन पर आधारित फास्ट ब्रीडर रिएक्टरों पर अनुसंधान व विकास चल रहा है। धात्विक ईंधन से ब्रीडिंग की दर मे वृद्धि होगी जिससे इन रिएक्टरों को तेजी से स्थापित करना संभव होगा ।

तृतीय चरण थोरियम-यूरेनियम 233 चक्र पर आधारित है । पिछले कई वर्षो के निरंतर प्रयास के फलस्वरूप भारत में संपूर्ण थोरियम ईंधन चक्र का समुचित अनुभव है । कल्पक्कम मे थोरियम से

जनित U-233 को ईंधन के रूप में प्रयुक्त कर कामिनी नामक अनुसंधान रिएक्टर कार्यरत है। थोरियम आधारित रिएक्टरों के लिए आवश्यक अनेक प्रौद्योगिकियों के विकास के उद्देश्य से एक प्रगत भारी पानी रिएक्टर का अभिकल्पन किया गया है। इसमें निहित निष्क्रिय सुरक्षा निकाय भविष्य में आबादी वाले क्षेत्रो के बहुत निकट स्थापित होने वाले पीढ़ी के रिएक्टरों के लिए उपयुक्त होंगे ।

**दीर्घकालीन ऊर्जा नीति**

जीवाश्म ईंधन के दहन पर आधारित ऊर्जा पर निर्भरता को कम करने के उद्देश्य की पूर्ति के लिए सौर व नाभिकीय ऊर्जा की स्थापित क्षमताओं का विशाल विस्तार आवश्यक है। आर्थिक दृष्टि से प्रतिस्पर्धात्मक मूल्यों पर विद्युत आपूर्ति के लिए बड़े पैमाने पर सौर ऊर्जा संयंत्रों की स्थापना में सफलता के लिए अद्यतन प्रौद्योगिकियों का विश्व व्यापी स्तर पर विकास व प्रदर्शन आवश्यक है। यहाँ इस तथ्य पर भी गौर करना उचित रहेगा कि ग्रिड के लिए अनुकूल सौर बिजलीघर अभी वास्तविकता से काफी दूर है।

नभिकीय ऊर्जा के क्षेत्र में ईंधन की वर्तमान में उपलब्ध मात्रा के आधार पर अपेक्षित विकास दर रखना असंभव होगा। अत: समय की माँग है कि एक निर्धारित समय के लिए ईंधन व रिएक्टरों का आयात कर अतिरिक्त नाभिकीय विद्युत क्षमता स्थापित ही जाए। निकट भविष्य में अतिरिक्त विद्युत आपूर्ति के साथ इसका लाभ यह होगा कि इन रिएक्टरों / ईंधन से प्राप्त प्लूटोनियिम से हमारे भावी कार्यक्रम के लिए ईंधन प्राप्त होगा। हाल ही में किए गये अध्ययनों से यह पता चला है कि सन् 2012-2022 के दौरान 40 GWe क्षमता के LWR या उसके समतुल्य ईंधन के आयात से सन् 2052 तक विद्युत की आवश्यकता व आपूर्ति के बीच की खाई को पाटा जा सकेगा। यह योजना थोड़ी महत्वाकांक्षी प्रतीत हो सकती है। परन्तु ग्लोबल वार्मिंग व ओजोन डिप्लीशन जैसी चुनौतियों के सामने बिना घुटना टेके देश की ऊर्जा की माँग को पूरा करने का और कोई मार्ग दिखाई नहीं देता । पिछले वर्ष के दौरान विश्व के अनेक देशों के साथ किए गए अंतरराष्ट्रिय असैन्य नाभिकीय व्यापार समझौते इसी लक्ष्य की ओर उठाए गए कदम हैं।

यहाँ यह बात समझना आवश्यक है कि इन समझौतों के कारण हमारे स्वदेशी नाभिकीय ऊर्जा कार्यक्रम पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा ।

**त्वरक चालित उप-क्रांतिक प्रणाली**

त्वरक चालित उप-क्रांतिक रिएक्टर प्रणाली एक उभरती हुई प्रौद्योगिकी है जिसका नाभिकीय प्रौद्योगिकी पर एक विशाल और दूरगामी प्रभाव पड़ेगा । इस रिएक्टर प्रणाली में उच्च न्यूट्रॉन मितव्ययता व सुरक्षा निहित होंगी और इसका उपयोग विद्युत उत्पादन, ईंधन प्रजनन तथा दीर्घ अर्द्धायु वाले नाभिकीय अपशिष्ट के भस्मीकरण के लिए किया जायेगा। इस प्रणाली में उच्च ऊर्जा (1 GeV) के प्रोटॉन एक भारी धातु पर प्रहार करते हैं जिससे बड़ी संख्या में बाह्य न्यूट्रॉन उत्पन्न होते हैं। ये न्यूट्रॉन एक उप क्रांतिक रिएक्टर को क्रांतिकता प्रदान कर विखंडन प्रक्रिया को बनाए रखते हैं। इस प्रौद्योगिकी के लिए आवश्यक त्वरकों व अन्य अवयवों का कार्य परमाणु ऊर्जा विभाग में जोर शोर से चल रहा है।

**हाइड्रोजन व नाभिकीय ऊर्जा :**

प्राकृतिक तेल व गैस की बढ़ती माँग व देश में इनकी अति न्यून उपलब्धता के कारण आने वाले समय में यातायात के साधनों पर इसका कुप्रभाव सामने आएगा। अत: शीघ्रातिशीघ्र इस सैक्टर के

लिए नए समाधान विकसित करना अत्यंत आवश्यक हो गया है। प्राकृतिक तेल व गैस का एक आकर्षक पर्याय है हाइड्रोजन। पर्यावरण की दृष्टि से भी हाइड्रोजन का ईंधन के रूप में उपयोग एक विवेकपूर्ण निर्णय होगा क्योंकि इसके दहन से कार्बन से कार्बन डाई आक्साइड का उत्सर्जन नहीं होगा। नाभिकीय ऊर्जा का उपयोग उच्चताप पर जल के विघटन के लिए बहुत महत्वपूर्ण होगा। इस बात को दृष्टि में रखते हुए परमाणु ऊर्जा विभाग में औद्योगिक स्तर पर व आर्थिक दृष्टि से प्रतिस्पर्धात्मक मूल्यों पर जल के तापीय विघटन द्वारा हाइड्रोजन के उत्पादन की प्रौद्योगिकी के विकास का कार्य चल रहा है। इस दिशा में एक उच्च तापीय नाभिकीय रिएक्टर कार्यक्रम प्रारंभ कर दिया गया है। इस प्रौद्योगिकी के विकास में सबसे बड़ी चुनौती ऐसे पदार्थों का विकास है जो पर्याप्त समय तक प्रतिकूल वातावरण को झेल सकें। प्रौद्योगिकी प्रदर्शन के लिए एक संहत उच्च तापीय रिएक्टर (CHTR) का अभिकल्पन कर लिया गया है। इसमें थोरियम-यूरेनियम 233 पर आधारित कणीय ईंधन को प्रयुक्त किया जाएगा। शीतलक के रूप में द्रवीय लैड-बिस्मथ मिश्र धातु को प्रयुक्त किया जाएगा।

**नाभिकीय संलयन :**

पूरे विश्व में ऐसे प्रयास जारी हैं कि नाभिकीय संलयन को नियंत्रित एवं निरंतर रूप में विकसित कर उससे प्राप्त ऊर्जा का उपयोग विद्युत उत्पादन में किया जा सके।

इसके प्रमुख लाभ होंगे कि.

i) इसका ईंधन (हाइड्रोजन व इसके समस्थानिक) प्रचुरता में उपलब्ध हैं ।

ii) रेडियो सक्रिय अपशिष्ट की समस्या नहीं है तथा

iii) रिएक्टर में रेडियो धर्मिता की मात्रा बहुत कम होने के कारण दुर्घटना की अवस्था में वातावरण में रेडियोसक्रियता के फैलने का खतरा बहुत कम है।

परमाणु ऊर्जा विभाग में प्रायोगिक स्तर पर नियंत्रित संलयन का विकास चल रहा है। आदित्य नामक भी कमीशन किया जा चुका है। एस.एस.टी. नामक निकाय भी कमीशन किया जा चुका है। इसके अतिरिक्त भारत अंतरराष्ट्रीय तापनाभिकीय प्रायोगिक रिएक्टर (ITER) कार्यक्रम में संयुक्त राज्य अमेरिका, यूरोपीय, यूनियन, जापान, रूस, चीन, दक्षिण कोरिया आदि देशों के साथ भागीदार है।

**उपसंहार :**

देश को सही अर्थों में सुखी, समृद्ध व खुशहाल बनाने के लिए स्थापित विद्युत उत्पादन क्षमता को लगभग 10-12 गुना बढ़ाने की आवश्यकता है । अत: आने वाले चार दशकों में प्रचुर, आर्थिक रूप से प्रतिस्पर्धात्मक, पर्यावरण की दृष्टि से स्वच्छ तथा विस्तृत ऊर्जा की उपलब्धता के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित कार्यवाही करनी आवश्यक होगी -

(क) जीवाश्म (fossil) स्त्रोतों पर निर्भरता को शनै:शनै: घटाना तथा उच्चतर चक्र कार्यक्षमता की ओर ले जाने वाली प्रौद्योगिकियों का विकास।

(ख) सौर व नाभिकीय ऊर्जा को ऊर्जा के प्राथमिक स्त्रोतों के रूप में विकास ।

(ग) हाइड्रोजन का ऊर्जा के प्रमुख वाहक के रूप में विकास और विशेषकर परिवहन सैक्टर में हाइड्रोजन द्वारा हाइड्रोकार्बनों का विस्थापन।

(घ) अपशिष्ट प्रबंधन व स्वाभाविक रूप से स्वच्छ प्रौद्योगिकियों के निरंतर विकास द्वारा सुरिक्षत व पर्यावरण की दृष्टि से स्वच्छ

नयाचारों (protocols) को लागू करना

(च) तापनाभिकीय संलयन तथा त्वरक परिचालित उप क्रांतिक रिएक्टर (accelerator driven sub critical reactor) जैसी नवीन व प्रगत प्रौद्योगिकियों के अनुसंधान, विकास, सुदृढ़ीकरण तथा व्यापारिक स्तर पर स्थापन के लिए पहल करना व पूँजी लगाना ।

इस बात में कोई संदेह नहीं है कि पिछ़ले दस हजार वर्षों से हमारी ऊर्जा की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए धधकती कार्बनिक अग्नि शनैः शनैः बुझ जाएगी और उसका स्थान यूरेनियम जैसे भारी परमाणुओं अथवा हाइड्रोजन जैसे हल्के परमाणुओं के नाभिकों से मिली अग्नि ले लेगी । ऊर्जा स्त्रोतों के विवेकपूर्ण दोहन की ओर मानव का यदी सही कदम होगा और स्वर्गीय भाभा का यह कथन की मनुष्य द्वारा परमाणु ऊर्जा की निर्मुक्ति तथा उसके उपयोग के बारे में ज्ञान का अर्जन मानव इतिहास का तीसरा युग है । हमारी सभ्यता को बनाए रखने के लिए तथा उसका आगे विकास करने के लिए, परमाणु ऊर्जा मात्र एक सहायचा मात्र ही नहीं, अपितु परम आवश्यक है चरितार्थ होगा ।

**परिचय**

**स्वप्नेश कुमार मल्होत्रा**

# रेडियो आइसोटोप तकनीक का पशु पोषण अध्ययन में उपयोग

**त्रिभुवन शर्मा**
पशु पोषण विभाग
पशु चिकित्सा एवम् पशु महाविद्यालय, (राजस्थान)

दुनिया के कई क्षेत्रों में, पशुओं के विकास की दर, प्रजनन क्षमता एवं दुध उत्पादन में कमी के कारण, पशु उत्पादन सिमीत हो चुका है। इस कारण पशुओं द्वारा उत्पादित उत्पाद भी सिमीत होकर रह गये है। जो मानव द्वारा उसके दैनिक जीवन में उपयोग आते है! पशुओं के उत्पादन में निरन्तरता की कमी के कारण अपर्याप्त असंतुलित पोषण, जलवायु परिस्थियों के अनुकूलता में कमी, परजीवी एवं अन्य बीमारीयां देखी जा सकती है।

पशुओं के उत्पादन, विकास एवं उनके सुधार क्षेत्र में रेडियो आइसोटोप तकनीकी का एक विशेष योगदान है। कोइ भी अन्य तकनीकों का उतना प्रभाव पशु शरीर क्रिया विज्ञान और पोषण में नही है जितना आइसोटोप तकनीक का है। इसके अलावा, कोई अन्य वैज्ञानिक तरीका भी नही है। जिनके द्वारा पशुओं में उपापचय की प्रक्रिया को सामान्य एवं रोग की स्थिती को समझा जा सके। ये तकनीक आर्थिक रुप में भी काफी महत्वपूर्ण है। पशुओं में पेट की बीमारी तथा उनमें प्रोटीन के निर्माण में कमी के कारण यही परजीवीहै। पशुओं के रोगो, विशेष रुप से परजीवी के संक्रमण के विरुद्ध, विकिरणत टिकों का उत्पादन, आइसोटोप तकनीक का एक विशेष योगदान है।

हाल ही में रेडियो इम्यूनो ऐसे का उपयोग पालतू जानवरों हार्मोनल स्थिति के निर्धारन तथा पशुओं के शारीरीक एवं पोषण की स्थिति तथा इनके वातावरण से सम्बधों के अध्ययन में लाया जा रहा है। इस विकसित तकनीक के द्वारा प्रजनन पर नियंत्रण हो पाया है। इसका प्रयोग कर इन मामलों में सफलता पाने की संभावना है।

कम विकसित देशों में मानव पोषण के लिए एक उच्च मुल्य के जैविक पशु प्रोटीन के उत्पादन की समस्या अभी तक बनी हुई है जो कि एक चिंता का विषय है। बिना किसी शंका के आइसोटोप तकनीकी अन्य अनुसंधान विधीयों के साथ कारगर साबित हो रही है। पोषण विज्ञान में यह होता है कि कोई भी जानवर अपना विकास, दुग्ध उत्पादन, प्रजनन, पूर्ण अनूवंशिक क्षमता आदि तब तक कि सभी आवश्यक पोषक तत्वों की जरुरत पूरी नही कर लेगा। विश्व भर में इन पोषक तत्वों को पालतू जानवरों के उत्पादन के लिए आइसोटोप तकनीक का उपयोग अब लगातार हो रहा है।

शताब्दी से यह ज्ञात है कि पशुओं में फॉस्फेट की कमी से उनकी उत्पादकता और प्रजनन क्षमता प्रभावित हो रही है। इसी तरह से लोहा, तांबा, कोल्बाट जैसे तत्वों की कमी से कई तरह के संक्रमण व उत्पादन में कमी भी पालतू जानवरों में देखी जा रही है। इन सभी कमीयों को दुर करने के लिए रेडीयो आइसोटोप का उपयोग होता है।

जॉर्ज हैव्सी नोबेल पुरस्कार विजेता, सबसे पहेले रेडीयो फोस्फेरस के माध्यम से बताया कि जानवरों द्वारा रेडीयो फोस्फरस का उपयोग उनके आहार में उपस्थित कैल्शियम, फोस्फरस एवं मैग्नीशियम के अवशोषण एवं उपापचयों को स्पष्ट किया जा चुका है। इस अध्ययन के द्वारा पशु शरीर के तत्व कैल्शियम, फोस्फरस एवं मैग्नीशियम को समझने और उनमें बदलाव करने में हमारी समझ बढी है। इस तकनीक के परिणाम स्वरुप पशु आहार एवं तर्कसंगत तरीके से फॉस्फेट का उपयोग, इसके अलावा अफॉस्फोरिससए मिल्क फीवर और घास अपतनिका जैसे कारणों का पता एवं इनके प्रभावी

रोकथाम को आइसोटोप तकनीक के द्वारा संभव बनाया जा सकता है। रेडियो आइसोटोप्स कई वर्षो से पालतू जानवरों के लिए तत्वों की उपयोगिता के अध्ययन में किया जाता रहा है। विशेष रुपसे शाकाहारी पशुओं में पोषक तत्वों के बीच असंतुलन व पशु उत्पादकता के अभाव के सीमित कारकों को सिद्ध किया है। तत्वों की कमी का पता लगाने के लिए उदा. के लिए अगर मिट्टी में कोल्बाट या कॉपर की कमी होने के कारण पादपों में इसकी कमी देखी जा सकती है। इस कारण उत्पादकता एवं उर्वरकता कम होने से पालतू जानवरों (शाकांहारी पशुओ) रोगो के प्रकट होने संभवना बढ सकती है। इसके विपरीत मिट्टी में मेलिब्डेनम या सेलेनियम की मात्रा बढ जाये तो शाकाहारी पशुओं के उपापचय संम्बधित प्रक्रम पर काफी विपरीत प्रभाव पडेगा।

आइसोटोप तकनीक के जरिये मिट्टी-पादप जानवरों के परस्पर तालमेल में संतुलन बनाया जा सकता है। पालतू पशुओं के शरीर क्रिया विज्ञान एवं पोषण विज्ञान में आइसोटोपका सफलता के साथ प्रयोग किये जा चुकें है। पेट व आंत्र पाचन, पोषक तत्वों का अवशोषण रक्त में अवशेषित पोषक तत्वों के परिवहन एवं इनका उपापवय आदि संकलित है।

आइसोटोप तकनीकों के प्रयोगों ने पाचन प्रक्रिया की प्रकृति के बारे में हमारी धारणा को बदल दिया है। एक तथ्य ये भी है कि पाचन तंत्र में रोगो कि रोकथाम में, इसकी निर्णायक भुमिका रही है। इस तकनीक के अलावा कोई अन्य तकनीक या विधी नही है जिसका योगदान पोषक तत्वों के रक्त के परिवहन को समझने में किया गया हो। कार्बन 14 लेबल का रुमिनेन्टस उपयोग के द्वारा उपापचयी रोगो तथा उनसे जुडे हानिकारक दुष्प्रभावों को कम किया गया है।

हम जानते है कि वसा की दुग्ध का ५० प्रतिशत निर्माण रुमन में उपस्थित एसीटिक अम्ल के द्वारा होता है। जबकी शेष आधे का निर्माण संतृत्त और संतृत्व वसीय अम्लों द्वारा लीवर में होता है। केसीन दुग्ध में सबसे महत्वपूर्ण प्रोटीन है। रक्त में लेबल, अमीनों एसीड का उपयोग प्रिकरसर के रुप में इस प्रोटीन के लिए इस विधि को बेहतर तरीकेसे समझा जा सकता है।

आइसोटोप का उपयोग परजीवी -मेजबान के संम्बध तथा उनकी समस्याओं पर प्रकाश डालने के लिए एक महत्वपूर्ण तकनीकी है। परजीवी के उपापचय व उनके पोषण की आवश्यकता तथा उनकी परिस्थितियों के क्रम की जानकारी भी प्राप्त की जा सकती है। इस प्रकार की जानकारी के द्वारा इनके नियंत्रण का बेहतर तरीका इजात किया जा सकता है। व इसका प्रयास जारी है।

आइसोटोप तकनीक ने पशु विज्ञान के सभी क्षेत्रों में तथा पोषण में विशेषकर काफी योगदान दिया है। तथा इस तकनीक में काम में लिए जाने वाले उपकरण भी काफी व्यावाहवरीक है। इस तकनीक के जरीए पशुओं की उत्पादकता को बढाया जा सकता है व आने वाली कल की तस्वीर सुनहरी हो इसका प्रयास सम्भव है।

**परिचय**

**त्रिभुवन शर्मा**
पशु पोषण विभाग
पशु चिकित्सा एवम् पशु महाविद्यालय, (राजस्थान)

# सामाजिक समृद्धि में विकिरण प्रौद्योगिकी का अनुप्रयोग

**डॉ. अनिल कुमार कोहली**
मुख्य कार्यकारी, विकिरण एवं आइसोटोप प्रौद्योगिकी बोर्ड
सेक्टर-20, वाशी, नवी मुंबई - 400 705.

**प्रस्तावना :**

विकिरण एवं रेडियो समस्थानिकों का अनुप्रयोग मानव जीवन के हर क्षेत्र में फैला हुआ है। यह अब हमारे जीवन का एक बहुत ही महत्वपूर्ण घटक बन गया है। विकिरण का प्रादुर्भाव तभी से है, जब से पृथ्वी का निर्माण हुआ है। प्राकृतिक स्रोतों से उत्पन्न विकिरण-समस्थानिकों के अलावा हम परमाणु रिएक्टरों तथा साइक्लोट्रोनों में रेडियो समस्थानिकों को उत्पन्न कर सकते हैं। विकिरण, मशीन-स्रोतों जैसे इलेक्ट्रॉन बीम और एक्स-रे से भी उत्पन्न किया जा सकता है। विभिन्न अनुप्रयोगों को ध्यान में रखकर पूरे विश्व में विभिन्न गुणवत्ता वाले रेडियो समस्थानिकों का उत्पादन किया जा रहा है। विकिरण एवं रडियो समस्थानिकों का अनुप्रयोग स्वास्थय, उद्योग, कृषि आदि क्षेत्रों और अनुसंधान कार्यों में होता है। ये सभी अनुप्रयोग आज के समय में न सिर्फ हमारे जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि करते हैं, बल्कि ये हमारे जीवन के महत्वपूर्ण भाग भी है।

**स्वास्थ्य के क्षेत्र में विकिरण तकनीकी का उपयोग:-**

स्वास्थ्य के क्षेत्र में विकिरण का उपयोग परमाणु ऊर्जा का समाज हित में एक महत्वपूर्ण योगदान है। एक्स-रे, रेडियोग्राफी में विकिरण का अनुप्रयोग एक सर्वविदित एवं सर्व सामान्य प्रयोग है। अब दूसरी नयी तकनीक उपलब्ध है जो अधिक रोग विषयक जानकारी प्रदान करने में सक्षम है। जैसे कम्प्यूटरी कृत टोमोग्राफी (CT), चुम्बकीय अनुनाद सादृश्यक (MRI) आदि। कुछ विकिरण समस्थानिक पर आधारित रोग निदान तकनीकी जो कि रोगीयों के विशिष्ट-आर्गन रासायनिक पदार्थों के साथ नामांकित कर के महत्वपूर्ण सूचना प्रदान करने में उपयोग किए जाते हैं। जैसे -आर्गन का कार्य-प्रचलन, अस्थि परीक्षण, Thallium or MIBI स्कैन आदि सामान्यत: सर्व प्रचलित है। इसी से संबधित नई तकनीक पोजीट्रोन ऐमीशन टोमोग्राफी ने चिकित्सा क्षेत्र में नई क्रांति ला दी है, जो विभिन्न कैंसर का पता प्रथम चरण में ही कर लेती है, ये तकनीक बहुत कम अर्ध-आयु वाले समस्थानिकों के ऊपर आधारित है, जिन्हे साइक्लोट्रॉन द्वारा उत्पादित किया जाता है।

कैंसर रोग निदान के लिए विकिरण चिकित्सा पद्धति का महत्वपूर्ण योगदान है। कैंसर एक खतरनाक व जानलेवा बीमारी है। चिकित्सा क्षेत्र में कैंसर रोग के निदान के लिए रेडियो उपचार एक महत्वपूर्ण घटक है। अब बाह्य बीम टेली थेरेपी के अतिरिक्त ब्रैकि थेरेपी (Brachytherapy) जिसमें एक छोटे से विकिरण स्रोत को अंदर रख कर ट्यूमर को संकुचित किया जाता है, और यह बहुतही महत्वपूर्ण साबित हो रहा है। यह स्वस्थ टीशू (कोशिकाओं) पर पड़ने वाले प्रभाव को प्रतिबंधित करने के लिए बहुत ही उपयोगी है। आज के समय में चिकित्सा पद्धति में प्रोट्रान का उपयोग भी अत्यधिक लोकप्रिय हो रहा है, जिसका उद्देश्य कैंसर कोशिकाओं को ऊर्जा-प्रदान करने वाले स्थान का पता लगाना होता है।

भारत समेत विश्व में अपनी इच्छा के अनुसार चिकित्सा पदार्थों के उत्पादन में गामा-विकिरण तकनीक बहुत ही उम्दा तरीके से स्थापित की गयी है। रोगोपचार हेतु अनुप्रयोगों में आयोडीन-131 बहुत ही उपयोगी रेडियो - समस्थानिक है। यह कुछ

प्रकार के रोग जैसे - हाइपरथायराइड और थायराइड कैंसर रोग के निदान के लिए प्रयोग किया जाता है। आयोडीन-131 के अलावा विभिन्न प्रकार के रेडियो-समस्थानिक उपलब्ध हैं, जिनका उपयोग विभिन्न प्रकार के रोगों की स्थिति और रोगों को कम करने के लिए, विशेषत: रोगियों में हड्डियों के दर्द को कम करने, जो की कैंसर के आगे के स्तर पर लोगों में होते हैं, उपयोग किया जाता है।

**औद्योगिक क्षेत्र में उपयोग**

बिना क्षय परीक्षण वाली औद्योगिक इकाई (NDT) एक ऐसी विशेष औद्योगिक इकाइयों में से प्रमुख है, जहाँ विकिरण का उपयोग करके लाभ लिया जाता है। एक्स-रे और गामा रेडियोग्राफी का उपयोग सिस्टम (निकाय) की बनावट का सही पता लगाने में इसका महत्वपूर्ण योगदान है। गामा सूक्ष्म-परीक्षण विधि का विस्तार करके कॉलम की आंतरिक स्थिति को कॉलम के बिना तितर बितर किए जान सकते हैं, तथा कारखानों के इष्टतम उत्पादन क्षमता अतिशीघ्र प्राप्त कर सकते है। इस तकनीक का उपयोग पेट्रोलियम कारखानों में पेट्रोलियम-शुद्धता के लिए हमेशा उपयोग होता है।

एक देश से दूसरे देश में आने वाली वाली पाइप लाइन जो कि भूमि के अंदर है, उसमें रिसाव तथा अवरोध का पता ूलगाने के लिए विकिरण का उपयोग किया जाता है, यह इसका एक महत्वपूर्ण उपयोग है। इसके अलावा इसका कोइ अन्य उपाय नही है। समुद्र के किनारे बंदरगाह पर एसी-46 विकिरण-समस्थानिक तथा रेत के मिश्रण का अपनी विशिष्ट स्थिति से खिसकने का तथा उपयोगी डम्पिंग साइट का पता लगाने में सहायक होता है। यहाँ बंदरगाहपर लगातार होने वाले ड्रेजिंग (Dredging) कार्यो में होने वाले खर्च की बचत में भी सहायक होता है।

विकिरण विधि के द्वारा इलेक्ट्रिकल केबिल तथा गाड़ियों के टायर में क्रास लिंकींग उत्पन्न कर सकते हैं, जो कि उत्पादन की दक्षता तथा उम्र बढ़ाने में सहायक होता हैं। विकिरण विधि हीरे के रंग परिवर्तन तथा उष्मा संकुचित ट्यूब (नलिका) और O- रिंग की गुणवत्ता बढ़ाने में भी सहायक होती है। ताप-विद्युत संयंत्र के द्वारा उत्पन्न प्रदूषण को खाद में परिवर्तित कर वातावरण के प्रदूषण को कम करने के लिए भी विकिरण विधि का प्रयोग किया जा सकता है।

सील बंद विकिरण स्रोत का उपयोग आज के समय में सामन्यत: न्यूक्लोनिक ग़ेज़ेज जिसका उपयोग घनत्व, स्तर तथा आर्द्रता के स्तर को मापने में किया जाता है।

**कृषि तथा खाद्य पदार्थों के संरक्षण में विकिरण का उपयोग :-**

विकिरण प्रसंस्करण विधि द्वारा खाद्य पदार्थ को संरक्षित, सुरक्षित एवं असंक्रमित करना परमाणु का समाज के लिए एक अन्य बहुत महत्वपूर्ण योगदान हैं। हालाकि इसका वास्तविक लाभ भारत में हर साधारण मनुष्य के लिए सिद्ध किया जाना है। यह तकनीक गेहूँ, चावल, दाल, अनाज आदि का संग्रह करने पर उन्हे खराब होने से बचा सकता है। फलों और सब्जियों के संरक्षण में भी इसकी अहम उपयोगिता है। विभिन्न प्रकार के रोगों की उत्पत्ति करने वाले जीवाणु जो कि पशुओं के भोज्य पदार्थों में होते हैं, को पूर्ण रुपेण नष्ट करने के लिए भी इसका उपयोग प्रभावकारी हो सकता है।

उत्पादों, पदार्थों के निर्यातसंबंधी संगरोधित अवरोध को समाप्त करने में भी विकिरण प्रसंस्करण तकनीकी का उपयोग किया जाता है। उदाहरण के तौर पर आमों को विकिरण प्रसंस्करण विधि के द्वारा संरक्षित कर अमेरिका में निर्यात किया जाता है, जब कि 18 साल पहले ऐसा संभव नहीं था। खाद्य पदार्थों को निर्यात करने के लिए विकिरण विधि ने भारत को एक बड़ा निर्यातक बनाने में समर्थ बनाया है। मसालों का निर्जीवीकरण कर जो कि रोजमर्रा जीवन की जरुरत है, जिसके द्वारा निर्यातक देश के पदार्थों की

गुणवत्ता में वृद्धि करते है, तथा आयात करने वाले देश की वस्तुओं को सूक्ष्म जीवाणु प्रभाव से दूर रख सकते है।

विकिरण के द्वारा पौधों में जैविक विभिन्नता प्रेषित कर एक महत्वपूर्ण द्रव्य साधन के रूप में उत्पादन को चयनित कर या विभिन्न विशेषताओं को समन्वित करके अच्छी नस्ल की पैदावार की जा सकती है। खेती की पैदावार में वृद्धि करना भा.प.अ.कें. अनुसंधान का एक मुख्य क्षेत्र है। इसमें पहले से ही 40 नयी प्रजातियां विकसीत कर व्यावसायिक रूप से कृषि की उन्नति के लिए प्रदान कर दिया गया है। इन किस्मों में बहु आयामी विशेषतायें जैसे-रोग से प्रतिरोध क्षमता में वृद्धि, अधिक उत्पादकता आदि कारगर सिद्ध हुई है।

जानकारी के अनुसार विकिरण चिन्हित खाद और कीटनाशक की सहायता से कृषि क्षेत्र भूमि का अधिक से अधिक व अच्छे से अच्छा उपयोग कर सकते हैं। स्टराइल इनसेक्ट तकनीक (Sterile Insect Techniqu, SIT) का अपना एक महत्व है, जो कि कीटनाशक का नियंत्रण पर्यावरण के अनुरुप करता है। (SIT) जिसके संघटक एक लक्ष्य निर्धारण, बांझपन और जन संख्या कम करने के लिए है।

**अनुसंधान में उपयोग**

विकिरण-समस्थानिक का आज के युग में जीव-विज्ञान तथा आणविक जीव- विज्ञान में महत्वपूर्ण भूमिका है।विकिरण चिन्हित जीवाणु-विज्ञान कई सालों से महत्वपूर्ण एवं अत्यंत उपयोगी उपकरण है। रडियो-ट्रेसर प्रणाली और उपकरणों का समुचित विकास वास्तव में आधुनिक जीव-विज्ञान के विकास और जीवाणु विज्ञान के मिलाने से उत्पन्न निष्कर्ष का प्रमाण है। विकिरण-समस्थानिक के कारण हम समझ सकते हैं, कि यह जीव-विज्ञान प्रकृति से संबंधित है, यह एक बहुत बढ़िया उदाहरण है जैसे प्रकाश संश्लेषित (Photo Synthesis) विभिन्न दवाओं की खोज में तथा आदेशित दवा लक्ष क्रांति एवं ADMA [Absorption (अवशोषण), Distribution(वितारण), Metabolism परिवर्तनशीलता या अचयनित Elimination (निवृत्ति) ] आदि दवा का स्थायित्व अध्ययन रडियो ट्रेसर का उपयोग करके ही संभव हो सकता है। आज के समय में वंश परंपरागत अध्ययन (Genomic Studies) तथा उसका विस्तृत रूप से पता लगाने के लिए, पहचान के लिए, क्रमबद्धता के लिए, परीक्षण के लिए वंशागत अनुभव की प्रांरभिक जानकारी के लिए आवश्यक समस्त अध्ययन विकिरण-समस्थानिक पर ही आधारित है। कोशिका विज्ञान और प्रोटीन सिन्थेसिस के अध्ययन में H-3 थायमाइडीन (H-3 Thymidine ) और C-14 ऐमीनों एसिड का उपयोग कर नियमित अनुमापन कर रहे हैं।

परमाणु ऊर्जा विभाग की इकाई विकिरण एवं आइसोटोप प्रौद्योगिकी बोर्ड (BRIT) रेडियो समस्थानिक आधारित विभिन्न उत्पादों के उत्पादन एवं पूरे देश में इसकी आपूर्ति का कार्य पूरे समर्पण के साथ करता है। उसके इस प्रयत्न के लिए भा.प.अ.कें. एवं एन.सी.पी.आइ.एल.उसे सहयोग देता है। ब्रिट के द्वारा 50,000 से अधिक सामग्री विकिरण-समस्थानिक के रूप में पूरे भारत में 2500 से अधिक उपभोक्ताओं के पास भेजे जाते हैं। पुराने अनुभव के आधार पर अब BRIT भविष्य की चुनौतियों की तैयारी कर रहा है। BRIT का यह प्रयास रहेगा कि वह विभिन्न अस्पतालों, रोग निदान केन्द्रों, NDT, पेट्रोलियम रिफायनरी, विकिरण चलित संयंत्र में अपना योगदान देता रहे तथा नये क्षेत्रो में इसकी शुरुआत करे। जिससे विकिरण तकनीक का नॉन पावर उपयोग कर देश की जनता को लाभान्वित कर उन्हें हर उॅचाई पर पहुँचाने में समर्थ हो सके।

परिचय

## डॉ. अनिल कुमार कोहली

डॉ. अनिल कुमार कोहली ने वर्ष 1974 में दिल्ली विश्वविद्यालय से यांत्रिक आभियांत्रिकी में स्नातक की उपाधि ग्रहण की। भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र के प्रशिक्षण विद्यालय का पाठ्यक्रम पूरा करने के बाद उन्होंने भा.प.अ.कें. के रिएक्टर आभियांत्रिकी प्रभाग से अपनी सेवाए आरंभ की। वर्ष 1982 में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), दिल्ली से उन्होंने 'आभियांत्रिकी उपकरणों की डिज़ाईन विषय में एम. टेक. किया तथा 1998 में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, दिल्ली से ही 'विकिरण प्रतिरोधक घनरुप स्नेहक ' विषय में पीएचडी की। डॉ. कोहली ने भापअकें के ईंधन पुनर्भरण प्रौद्योगिकी प्रभाग के आदि पारुप द्रुत प्रजनन रिएक्टर ईंधन प्रहस्तन तथा शिपिंग कास्क ग्रुप के अध्यक्ष के रूप में तथा भापअकें के प्रौद्योगिकी हस्तांतरण एवं सहयोग प्रभाग में प्रभारी अभियंता, परामर्श सेवाएं एवं यांत्रिक प्रौद्योगिकियाँ के रुप में काम किया। दाबित भारी पानी रिएक्टर ईंधन प्रहस्तन प्रणाली की उप प्रणायों तथा विविध घटकों के अभिकल्पन एवं विकास में आपने महत्वपूर्ण योगदान दिया। डॉ. कोहली ने वर्ष 2001 में विकिरण एवं आइसोटोप प्रौद्योगिकी बोर्ड में आभियांत्रिक डिजाइन, गुणता आश्वासन तथा ग्राहक सहायता कार्यक्रम के वरिष्ठ महाप्रबंधक का कार्यभार संभाला। विभिन्न सिमितियों में भी अलग-अलग पदो को विभूषित किए। ब्रिट की गतिविधियों को आगे बढ़ाने में नई पहल की। जनवरी 2006 से डॉ. कोहली ने विकिरण एवं आइसोटोप प्रौद्योगिकी बोर्ड (ब्रिट) के मुख्य कार्यकारी पद का भार संभाला है।

# खाद्य पदार्थों एवं तत्संबंधी उत्पादों का विकिरण द्वारा प्रसंस्कारण

डॉ. अरुण कुमार शर्मा
अध्यक्ष, खाद्य प्रौद्योगिकी प्रभाग,
भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, मुम्बई-85

देश के नागरिकों को पर्याप्त मात्रा में खाद्य पूर्ति हेतु कृषि उत्पादन में वृध्दि के उपायों के साथ-साथ संग्रहित अनाज की संरक्षा अति आवश्यक है। प्राप्त खाद्यान्नों एवं पदार्थों के प्रसंस्करण, हस्तन, भंडारण व वितरण का कार्य उतना ही महत्वपूर्ण है जितना खाद्य पदार्थों की अनवरत उपलब्धता हेतु उत्पादन बाढ़ाना, खाद्य पदार्थों की संरक्षा तथा कृषि उत्पादों का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार आदि । नाभिकीय ऊर्जा एवं प्रौद्योगिकी ने फसल उत्पादक क्षमता और कृषि उत्पाद के संरक्षण एवं शुध्दिकरण में मुख्य भूमिका निभाई है।

**आयनीकारक विकिरण से खाद्य पदार्थों का परिरक्षण :**

आयानीकारक विकिरण से खाद्य पदार्थों के परिक्षण हेतु नियंत्रित आयानीकारक विकिरण ऊर्जा जैसे- गामा किरणों, क्ष-किरणों तथा कृषि खाद्य उत्पादों एवं घटकों के भंडारण व आयु सुधार के साथ-साथ संरक्षा एवं शुध्दिकरण हेतु त्वरित इलेक्ट्रॉनों का प्रयोग किया जाता है। इस प्रक्रिय में या तो कोबाल्ट-60 जैसे रेडियो समस्थानिकों से उत्सर्जित गामा किरणों या उच्च ऊर्जा वाले इवेक्ट्रॉनों एवं इलेक्ट्रॉन त्वरितों से उत्सर्जित क्ष-किरणों का उपयोग होता है।

गामा विकिरण, एक्स-रे आदि से कृषि उपकरण, खाद्य पदार्थों और उत्पादों का उन्नत रुप से परिक्षण एवं शुध्दिकरण किया जाता है। इस प्रक्रिया में या तो गामा-किरण जो कि रेडियोआइसोटोप जैसे कोबाल्ट-60 से उत्सर्जित की जाती है, या अत्यधिक ऊर्जा वाले इलेक्ट्रॉन और एक्स-रे जो कि इलेक्ट्रॉनों की गति बढ़ाने वाले यन्त्र (इलेक्ट्रॉन-त्वरक) का उपयोग किया जाता है।

कृषि एवं खाद्य पदार्थों के विकिरण प्रक्रिया के द्वारा अधिक से अधिक तकनीकी लाभ प्राप्त किये जा सकते हैं।

-भंडारित उत्पादों पर कीटनाशकों एवं स्वयं कीटाणुओं के उपयोग से होने वाले संक्रमण से बचाव।

* फलों और सब्जियों के शीघ्र पकने और सड़ने पर रोक ।
* कन्द-मूल आदि के शीघ्र अंकुरित होने पर रोक ।
* खाद्य पदार्थों को दूषित करने वाले सूक्ष्म जीवों को नष्ट करने एवं रोकथाम में सहायता ।
* परजीवों और रोगणुओं के विकास में रोकथाम ।

विकिरण-डोज (मात्रा) के अनुसार ये सभी तकनीकी लाभ-कम मात्रा, मध्यम मात्रा और अधिक मात्रा में वर्गीकृत किये गये हैं ।

**खाद्य पदार्थों के विकिरणन - प्रसंस्करण से लाभ :**

आयनीकारक विकिरणों से खाद्य परिरक्षण के अनेकों हैं । इसका कारण प्रणाली की शीत लाभ प्रक्रिया एवं आयनीकारक विकिरण की उच्च भेदन शक्ति है ।

* यह एक भौतिक प्रक्रिया, है, जिसमें संशोधन के लिए अतिरिक्त अवयवों की आवश्यकता नहीं होती ।
* अति उपयुक्त एवं प्रभावी प्रक्रिया है इसमें खाद्य पदार्थो में अतिसूक्ष्म परिवर्तन होता है।
* यह विधि कार्य करने वाले व्यक्ति के लिए सुरक्षित और आसान है ।
* हानिकारक पदार्थ नहीं निकलते हैं।
* यह प्रक्रिया डिब्बों में बंद वस्तुओं पर अपनायी जा सकती है ।
* यह शीत प्रक्रिया है अत:इससे खाद्य पदार्थों की ताजगी एवं शुध्दता बरकरार रहती है ।

विकिरणन प्रणाली खाद्य पदार्थों के संशोधकों के लिए बहुत से लाभ प्रदान करती है। यह तकनीकी अन्य उपलब्ध प्रणालियों के साथ उपयोग में लायी जा सकती है। हालाँकि

यह अंतरिम उपाय नहीं है। अत:इसका उपयोग कुछ चुनिंदा खाद्य वस्तुओं पर संभव है। यह प्रक्रिया एन्जाइमस और वायरस को पूर्णत: अवरूध्द नहीं कर सकती । इसलिए इस प्रणाली का उपयोग अन्य प्रोद्योगिकी के साथ कर अधिकतम लाभ उठाया जा सकता है, पर पूर्ण लाभ असंभव है। इसलिए कुछ निश्चित प्रोद्योगिकीय लाभों के लिए इसे ब्लैविंग (जोसफसन एवं पीटरसन 1983) जैसे हल्के उष्मोपचार के साथ जोड़ने की आवश्यकता होती है।

**संपूर्णता एवं संरक्षा पहलू :**

विकिरण संशोधन विधि, (प्रणाली) किसी अन्य प्रणाली की तुलना में अधिक सुरक्षित एवं संपूर्ण है। इसके विभिन्न पक्षों का विस्तृत रूप से अध्ययन किया गया है, जो निम्नावत है-[विश्व स्वास्थ्य संगठन, 1994, दिल्ली 1997 (WHO)]

-प्रेरित रेडियोधर्मिता का अनुमान
-जैविक संरक्षा
-रासायनिक परिवर्तन से बचाव
-पोषण पूर्णता
- प्रकिया से संशोधन खाद्य पदार्थों का अन्य जीवों पर अध्ययन
-मनुष्य के लिए परीक्षण

कोबाल्ट-60 से गामा किरणों की ऊर्जा 1.3 मेगा इलेक्ट्रॉन वोल्ट, एक्स-रे की ऊर्जा 7.5 Mev, त्वरित इलेक्ट्रॉन (10 Mev) जिससे खाद्य पदार्थों के परमाणुओं में कोई रेडियो सक्रियता नहीं होती है । इन वस्तुओं की जैविक, पोषक एवं रासायनिक पहलूओं का विस्तृत रूप से अध्ययन से यह पता नहीं चला है कि इस पद्धति से खाद्य वस्तुओं पर कोई हानिकारक नहीं प्रभाव पड़ा है ।

**अंतर्राष्ट्रीय अनुमति :**

1980 में संयुक्त समिति (FAO/IAEA/WHO) जॉइंट एक्सपर्ट कमेटी ऑन फुड इरिडेशन (JECFS) से प्राप्त जानकारी के अनुसार विभिन्न खाद्यों को विकिरणन द्वारा संशोधित किया गया और पाया गया कि अधिकतम 10 किलो ग्रे की मात्रा तक खाद्य पदार्थों में कोई हानिकारक प्रभाव नहीं है और जीवाणुओं का रोकथाम भी संभव है । खाद्य पदार्थों के पोषकता में भी कोई कमी नहीं पायी गई । इसके पश्चात् 1983 में कोडेक्स ऐलिमेनटेरियस कमीशन(Codex Alimentarius Commission) जो कि FAO द्वारा अधिकृत है, सम्पूर्ण विश्व में विकिरण खाद्य पदार्थों और संचित अनाज की सुरक्षा हेतु अधिनियम स्थापित किये । विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा 1994 में JECFI के निष्कर्ष को पुन: जाँच कर इसकी पुष्टि की गयी। 1996 में विश्व स्वाथ्य संगठन (WHO) ने 10 किलो ग्रे से अधिक विकिरण की मात्रा की हानिरहित होने की पुष्टी की । 2003 में कोडेक्स ऐलिमेनटेरियस कमीशन (Codex Alimentarius Commission) ने विकिरणित सामान्य मानकों (Codex General Standard for Irradiated food) का पुन: संशोधन किया, जिसमें 10 K gy से अधिक विकिरण मात्रा के उपयोग की विभिन्न तकनीक शामिल हैं ।

**Sanitary and Phytosnitary (SPS) एवं व्यापार पर तकनीकी अवरोध :**

विश्व व्यापार संगठन (WTO) के अंतर्गत SPSP (Sanitary and Phytosnitary Practices) एवं TBT (Technical Bavier for Trade) ने सहमित देते हुए विकिरण प्रणाली को अंतराष्ट्रीय व्यापार में स्वीकृति दी है । अत: विकिरण प्रणाली का उपयोग करके संक्रमण से रोकथाम और बंद वस्तुओं की शुध्दता को लंबे समय तक बरकरार रखा जा सकता है । जो की अंतराष्ट्रीय व्यापार में अत्यंत सहायक है । ये सभी मत अंतराष्ट्रीय संस्थायें जैसे Codex Alimentarius Commission, Interational Plant Protection (IPPC) और Interational Office of Epizootics द्वारा निर्धारित, संचालित एवं सत्यापित किये जाते हैं। जिसे देश की सरकार उपरोक्त संस्थाओं द्वारा निर्धारित नियमों के अतिरिक्त अन्य सख्त नियम लागू करती है, उसे विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) को पूर्ण न्यायिक पृष्ठभूमि प्रदान करना आवश्यक है । WHO से जुडे देशों को प्रकीर्णन (विकिरण प्रणाली या विधि) को अंतराष्ट्रीय व्यापार में आवश्यक एवं लाभदायक मानते हुए

इसे प्रोत्साहन करना चाहिए । आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड नें भी प्रकीर्णित खाद्य पदार्थों के आयात की अनुमति दी है और विकिरण प्रणाली के विकास हेतु प्रयासरत हैं । इसी मार्ग पर आगे बढ़ते हुए UPFDA ने विकिरण विधि उद्योग के लाभ हेतु महत्वपूर्ण सहमति दी है । इसमें एक्स-रे की 7.5 Mev ऊर्जा स्तर की अनुमति सन् 2007 में दी है और इसका उपयोग सूक्ष्म जीव द्वारा संक्रमण को रोकने हेतु विशेष रूप से Molluskan Shellish पर 5.5 KGy के डोज की स्वीकृति दी है । अगस्त 2008 में Icebeg lettuce और पालक के सूक्ष्म-जीवी संक्रमण से रोकनाथ हेतु की स्वीकृति दी है ।

**भारत में खाद्य पदार्थों के विकिरण प्रसंस्करण की अनुमति :**

1986 में भारत सरकार ने विकिरण का व्यवसायिक स्तर पर उपयोग हेतु राष्ट्रीय मॉनीटरन अभिकरण की स्थापना की । 1991 में परमाणु ऊर्जा अधिनियम लागु किया गया और खाद्य पदार्थ के विकिरणन पर परमाणु ऊर्जा के नियंत्रण (Atomic Energy control of irrdiation of food) नियम स्थापित किये गये। 1994 में प्याज, आलू एवं मसालों पर विकिरणन विधि के उपयोग की अनुमति दी गयी। 1998 से 2001 तक कुछ और खाद्य पदार्थों और फसलों पर विकिरणन प्रणाली के उपयोग की अनुमति मिली। 2004 में भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र के अनुरोध पर कृषि एवं सहकारी मंत्रालय भारत सरकार ने Plant Quarantire regulation को लागू किया एवं plant Quarantire (Regulation of Import into india) आदेश का 2003 में प्रकाशन किया। इसके फलस्वरुप फरवरी 2006 में Frame-work equirvalence VSDA-APHIS एवं मंत्रालय के बीच कार्य योजना संधि संपन्न हुआ और विकिरणन का प्रयोग संयुक्त राष्ट्र में निर्यात होने वाले फलों, मुख्य रूप से आम पर किया गया। हालाँकि USDA और कृषि एवं सहकारी मंत्रालय, भारत के बीच संधि की शुरुआत 2004 के पूर्व में शुरु हो गई थी, किन्तु USDA-APHIS का अंतिम निर्णय भारत से आमों का आयात का प्रकाशन 12 मार्च 2007 में हुआ।

**प्रौद्योगिक निरुपण इकाइयाँ :**

भारत में व्यवसायिक रुप से विकिरणन विधि का उपयोग विशेष अनुमति से किया जा सकता है । यह अनुमति अथवा अधिकार परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद (Atomic Energy Regulatory Board) द्वारा जारी मापदंडों की पूर्ति कर पाया जा सकता है । परमाणु ऊर्जा विभाग ने भारत में दो तकनीकी प्रदर्शन इकाइयाँ स्थापित की है। वाशी, नवी मुम्बई में स्थित विकिरणन ईकाइ की क्षमता 30 टन है जो मध्य एवं उच्च स्तर की विकिरणन प्रक्रिया में सक्षम है । इस प्रक्रिया का उपयोग मसालों, सूखी-सब्जियों प्याज आदि पर किया जाता है । इस ईकाइ का प्रचालन (ब्रिट) विकिरणन एवं आइसोटोप प्रोद्योगिकी परिषद् (Bord of Radiation & Isotope Technology) जनवरी 2000 से हो रहा है ।

कृषि उत्पादन संरक्षण केन्द्र (KRUSHAK) 9 वीं पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र के खाद्य प्रौद्योगिक प्रभाव व्दारा तकनीकी प्रदर्शन उपक्रम के रुप में स्थापित हुआ । यह निम्न स्तर की विकिरणन प्रक्रिया का उपयोग कर प्याज एवं आलू के अंकुरण पर नियंत्रण, कीटाणुओं द्वारा संक्रमण पर रोकथाम और फलों एवं सब्जियों के संरक्षण हेतु कार्याधीन हुआ। कृषि उत्पादन संरक्षण केन्द्र (KRUSHAK) ही एक मात्र इकाई है, जो कि आम के संरक्षन व संग्रहण के लिए USDA-APHIS से मान्यता प्राप्त है । यूनाइटेड स्टेट में आम के निर्यात का एक मुख्य कारण USDA-APHIS एवं कृषि एवं सहकार विभाग, भारत सरकार के बीच सुविधा पूर्ति (Facility Commpliance Agreement) नामक संधि है। अंतत: 26 अप्रैल 2007 में USDA के व्दारा परीक्षण के अंतिम चरण के पश्चात संधि को पूर्ण सहमति दे दी गई । जाँच के तौर पर पहली खेप को न्यूयार्क भेजा गया । व्यावसायिक स्तर पर विकिरनण विधि 2007
में शुरु हो गई । KRUSHAK दुनिया का पहला Cobalt-60 गामा विकिरण सुविधा केन्द्र बना, जिसे USDA-APHIS व्दारा प्रमाणित किया गया । इसका श्रेय यह रहा कि 18 वर्ष बाद पुन: आम का निर्यात संभव हुआ। 2007 से 2009 के मध्य 552 टन आम का निर्यात हो चुका है। इस वर्ष कम पैदावार हाने के कारण केवल 130 टन का निर्यात है । हालाँकि 14.5 टन केसर आम का समुद्रमार्ग से निर्यात एक सफल उपलब्धि है। मात्र 30 दिन की अवधि में माल

न्यूर्याक पहुँचाया गया । इस कार्य में APEDA,. MSAMB और साँची एक्सपोर्ट सहायक रहे। इससे भारतीय आम का मूल्य यू.एस.के बाजार में वर्तमान दर से आधे दर पर आ जायेगा । ये कीमत लगभग 35 डालर प्रति दर्जन तक आ सकती है ।

**भारत में व्यापारिक संभावनाएँ :**

भारत में खाद्य पदार्थ की विकिरणन विधि का उपयोग निर्यात और देशी बाजार में बिकने वाली वस्तुओं दोनों में किया सकता है । निर्यात हेतु खाद्य पदार्थों की उपयोग अवधि, शुध्दता एवं संक्रमण से सुरक्षा आदि के लिए विकिरणन विधि अत्यंत सहायक है । भारत का बासमती चावल, मसालों, समुद्री खाद्य पदार्थों, माँस,कंद अंडे और डेरी उत्पाद के निर्यात में विशेष स्थान है। विकिरणन विधि से थोक एवं फुटकर वस्तुओं के मूल्य का पुनर्निर्धारण एवं मूल्य योजित विक्रय वस्तुओं को सीधे बाजार में उतारने में सहायता मिली है। भारत दुनिया के सबसे बड़े देशी बाजारों में से एक है तथा यहाँ भारी मात्रा में अनाज, दालें, दुग्ध सामग्री, फल, सब्जियाँ, समुद्री खाद्य, मसाले आदि संचरित, संग्रहित और वितरित किये जाते हैं । संग्रहण और वितरण के दौरान हजारों-करोड़ों रुपयों का अनाज एवं अन्य खाद्य पदार्थ सडने एवं कीटाणुओं द्वारा संक्रमण से बेकार अथवा नष्ट हो जाता है। अगर हम इस भारी खाद्य मात्रा का आंशिक मात्रा भी, विकिरण विधि से संशोधित करना चाहते हैं, तो हमें भविष्य में कई नयी सुविधाओं की आवश्यकता पड़ेगी । उद्योगपतियों एवं निवेशकों ने इस विषय में रुचि दिखाई है । विकिरण एवं अइसोटोप प्रौद्योगिकी परिषद् (BRIT) ने 20 से अधिक प्रस्ताव पारित किय हैं, जिनमें उद्योगों और निवेशकों को विकिरण प्रणाली इकाइयाँ तो उन्नत स्तर पर निर्माणाधीन अथवा तैयार है । अगले कुछ वर्षों में विकिरिणित खाद्य पदार्थों एवं तत्संबंधी उत्पादों की देश में भारी मात्रा में बढने की आशा है।

**चुनौतियाँ :**

विकिरणन सुविधा के संचालन में सबसे बडी चुनौतियों में से एक आर्थिक व्यवहार्यत है । विकिरणन सुविधा केवल एक ही विक्रय वस्तु अथवा खाद्य वस्तु के संशोधन के लिए उपयोग में लाना बिल्कुल भी कार्य सिध्द नहीं है। इसके अलावा कृषि पदार्थ उपज, मौसम और क्षेत्र के अनुसार भिन्न है। अत:विकिरणन ईकाइयों को इस प्रकार निर्मित करना चाहिए, जिससे विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थों को एक ही प्रणाली से संशोधन हो सके और उपज के उतार-चढाव में समन्वय हो सके । हमें उन्नत इंजीनियरी अभिकल्पन एवं रुपरेखा से इकाइयाँ तैयार करनी चाहिए, जिसमें लगभग सभी प्रकार के उपयोग संभव हो सकें । साथ-साथ नई प्रौद्योगिकी एवं उत्पाद को अपनाने के सटीक नियम होने चाहिए, जिससे इन्हें शीघ्रतापूर्वक उपयोग में लाया जा सके। सरकारी ऐजेंसी, उद्योग, अनुसंधान एवं विकास संस्थानों में उपयुक्त समन्वय होना चाहिए । व्यापक स्तर पर इस प्रौद्योगिक के निरुपण हेतु उपभोक्ता एवं निवेशकों की जागरुकता और विकास इसका एक प्रमुख अन्य पहलू है ।

**सारणी - 1 विकिरण प्रसंस्कारण का अनुप्रयोग**

**कम विकिरण मात्रा अनुप्रयोग (1 किलोग्रे से कम)**

* आलू एवं प्याज में अंकुरण की रोकनाथ ।
* भंडारित अनाज, दालें एवं उत्पादों में कीट सक्रमण को रोकथाम ।
* माँस एवं उत्पादों में परजीवी किटाणुओं का विकास ।

**मध्यम विकिरण मात्रा अनुप्रयोग (1-10 किलो ग्रे)**

* ताजे फलों, माँस एवं कुक्कुटादि से सूक्ष्म किटाणुओं को हटाना ।
* माँस तथा मुर्गी से खाद्य संबंधी विकृतियों का निवारण ।

**उच्च मात्रा विकिरण अनुप्रयोग (10 किलोग्रे से अधिक)**

* विशेष आवश्यकता ओं के अनुरुप खाद्यों के निजर्मीकरण हेतु ।
* रेफ्रिजरेटर के बिना खाद्य पदार्थों को स्वस्थिति में सुरक्षित रखने हेतु।

## खाद्य पदार्थों में मिलावट के रोकनाथ के भारतीय एक्ट के नियमों अनुसार विकिरण हेतु अनुमोदित खाद्य पदार्थ

| क्रम | खाद्य पदार्थ | विकिरण की मात्रा (किलो ग्रे) | | उद्देश्य |
|---|---|---|---|---|
| | | न्यूतम | अधिक | |
| 1 | प्याज | 0.03 | 0.09 | अंकुरित की रोकथाम |
| 2 | आलू | 0.06 | 0.15 | ,, |
| 3 | लहसुन, आदी एवं छोटी प्याज | 0.03 | 0.15 | अंकुरण की रोकथाम |
| 4 | चावल | 0.25 | 1.0 | कीट संक्रमण की रोकथाम |
| 5 | सूजी (रवा), आटा और मैदा | 0.25 | 1.0 | ,, |
| 6 | दालें | 0.25 | 1.0 | ,, |
| 7 | सूखें समुद्री फुड | 0.25 | 1.0 | ,, |
| 8 | अंजीर, खजूर, किशमिश | 0.25 | 0.75 | ,, |
| 9 | आम | 0.25 | 0.75 | सेल्फ लाइफ की अभि वृध्दि |
| 10 | माँस,माँस उत्पादों चिकेन | 0.25 | 4.0 | ,, |
| 11 | ताजे समुद्री फुड | 1.0 | 3.0 | ,, |
| 12 | अति शोतित समुद्री फुड | 4.0 | 6.0 | विकृति निवारण |
| 13 | मसाले | 6.0 | 14.0 | कीटाणु संइषण निवारण |

**डॉ. अरुण कुमार शर्मा**

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान से माइक्रो बायलोजी में स्नाकोत्तर की उपाधि अर्जित करने के पश्यात डॉ. ए. के. शर्मा ने 1975 में भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र के प्रशिक्षण विद्यालय से प्रशिक्षण प्राप्त की । उनके एफ्लाटोक्सीन जैव संश्लेषण तथा खाद्य पदार्थों में नियंत्रण से संबंधित प्रारंभिक शोध कार्य हेतु 1984 में मुम्बई विश्वविद्यालय ने उन्हें पी. एच. डी. की उपाधि प्रदान की ।

डॉ. शर्मा ने खाद्य विकिरण के क्षेत्र में विशेष रुप से खाद्य पदार्थों के सूक्ष्म जैविकीय संरक्षा, आम व मसालों सहित कई खाद्य पदार्थों के विकिरण प्रसंस्करण हेतु उल्लेखनीय योगदान दिया है ।

विकिरण एवं रेडियो समस्थानिकों के अनुप्रयोग के क्षेत्र में उनकी विशिष्ट उपलब्धियों हेतु इंडियन न्यूक्लीयर सोसायटी ने उन्हें 2006 में विशेष सम्मान प्रदान किया है । उनके राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में 300 से अधिक शोध-पत्र प्रकाशित हुए हैं तथा उन्होंने राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठियों में अपने लेख व वार्ताएँ प्रस्तुत की है। वह भारतीय पर्यावरण विभाग म्यूटजन सोसायटी आफ इंडिया के सचिव तथा पर्यावरण विभाग एवं प्रौद्योगिकी संस्थान के उपलब्ध रह चुके हैं ।

डॉ. शर्मा भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र के विशिष्ट वैज्ञानिक है तथा वर्तमान प्रौद्योगिकी प्रभाग के अध्यक्ष के पद पर कार्य रत है । वह होमी भाभा राष्ट्रीय संस्थान, मुम्बई के वरिष्ठ प्रोफेसर के रुप में अनुवध्द है ।

# परमाणु चिकित्सकीय तकनीकों का पशु चिकित्सा में उपयोगः वर्तमान एवं भविष्य की संभावनाएं

प्रो. ए.के.गहलोत कुलपति
राजस्थान पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय बीकानेर

वर्तमान युग विज्ञान का युग है। जीवन के सभी क्षेत्रों में आधुनिक तकनीकों का इस्तेमाल कर पृथ्वी पर जावों का जीवन सुगम बनाने के प्रयास जारी हैं। पशु चिकित्सा के क्षेत्र में भी परमाणु चिकित्सा प्रयास महत्वपूर्ण योगदान दे रहे है। परमाणु चिकित्सकीय तकनीक का पशु चिकित्सा विशेषकर पशुरोगों की पहचान व उनके निदान में उल्लेखनीय महत्त्व है।

पशु चिकित्सा के क्षेत्र में परमाणु चिकित्सकीय तकनीके महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करती है। पशु रोगों कि पहचान तथा उनका निदान करने में परमाणु चिकित्सा बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। वर्तमान में एक्स-रे करणे और रेडिया सक्रिय पदार्थ पशु रोगों की पहचान तथा उपचार करने में तथा पशु अनुसंधान के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे है।

पशु चिकित्सा क्षेत्र में रेडियो सक्रिय पदार्थ टेक्निसियम-99 निदान के लिये तथा $I^{131}$ को हाइपर थायरोइडिजम के उपचार हेतु प्रयोग करते है। परमाणु चिकित्सा के अनुप्रयोग व द्वारा हम वृक्क की कार्यक्षमता की जांच कर सकते है। वृक्क के संक्रमण, गांठ,पथरी व चोट का पता लगा सकते है। कंकाल तंत्र की संरचना का पता लगाने में भी परमाणु चिकित्सा महत्वपूर्ण योगदान करती है।

परमाणु चिकित्सा के द्वारा हम हड्डियों की गांठ,हड्डियों का टूटना एवं गठिया रोग का पता लगा सकते हैं। थायराइड ग्रंथि की कार्यक्षमता एवं संरचना का अध्ययन भी हम परमाणु चिकित्सा के द्वारा कर सकते है।

मस्तिष्क के अध्ययन में परमाणु चिकित्सा उपयोगी है। अल्ट्रासाउण्ड पशु चिकित्सा क्षेत्र में परमाणु चिकित्सा का एक महत्वपूर्ण अनुप्रयोग है। पशु शरीर में हार्मोन का स्तर पता लगाने के लिए भी हम परमाणु चिकित्सा का उपयोग कर सकते है।

परमाणु चिकित्सा और पशु चिकित्सा भविष्य में परमाणु चिकित्सा का और अधिक उपयोग पशु रोगों के निदान एवं उपचार में किया जायेगा। लेजर विकितण का उपयोग आने वाले भविष्य में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगी।

**विकिरण द्वारा स्टेम कोशिका उपचार** एक प्रकार की हस्तक्षेप इलाज पद्धति है, जिसके तहत चोट अथवा विकास के उपचार हेतु क्षतिग्रस्त ऊतकों में नई कोशिकाएं प्रवेशित कीजाती है। पशु चिकित्सकीय शोधकर्ताओं को आशा है कि व्यस्त और भ्रूण स्अेम कोशिका शीघ्र ही कैंसर, डायबिटीज प्रकार, पार्किन्सन रोग, हंटिन्टन रोग, सेलियाक रोग, हृदय रोग, मांसपेशियों के विकास और अन्य कई रोगों का उपचार करने में सफल होगी। इसके संभावित उपचार निम्न है :-

1. मस्तिष्क क्षति
2. कैंसर
3. रीढ की हड्डी का उपचार
4. गंजापन
5. बांझपन
6. कान के रोग आदि

परमाणु चिकित्सा इमेजिंग में शरीर में रेडियो एक्टिव तत्व को प्रविष्ट करवाया जाता है तत्पशचात गामा किरण उत्सर्जन द्वारा उसकी स्थिति का पता लगाकर संबंधित रोग ग्रस्त भाग का पता लगाया जाता है। यह विधि प्रमुख रूप से हृदय तथा वृक्कों की व्याधियों के निदान में उपयोग की जाती है।

परमाणु ऊर्जा विभग द्वारा परमाणु ऊर्जा और विकिरण के अनुप्रयोग के माध्यम से पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान में महत्वपूर्ण योगदान दिया जा रहा है। आने वाले समय में परमाणु ऊर्जा, पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान के क्षेत्र में नए आयाम स्थापित करेगी। जिसका लाभ पशुओं, पशुपालकों तथा पशु चिकित्सकों को भी मिलेगा तथा इसके माध्यम से पशुरोगों के निदान एवं उपचार को एक नई दिशा मिलेगी।

# परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम का पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान के क्षेत्र में योगदान

डॉ. एस. बी. एस. यादव
अधिष्ठाता, पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर

वर्तमान समय में परमाणु ऊर्जा का उपयोग सभी क्षेत्रों में निरन्तर प्रगति कर रहा है। पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान का क्षेत्र भी इससे अछूता नहीं है। परमाणु ऊर्जा के पशु विज्ञान एवं पशु चिकित्सा क्षेत्र में कुछ महत्वपूर्ण अनुप्रयोग निम्न है :-

1. एक्स किरणें (X-Rays)
2. अभिकलन ट्रोमोग्राफी (CT)
3. चुम्बकीय अनुनाद इमेजिंग (MRI)
4. अल्ट्रासाउण्ड (Ultrasound)
5. एकल फोटोन उत्सर्जन अभिकलन(SPECT)
6.PTEस्कैनिंग (पोजिट्रान इमिशन ट्रोमोग्राफी)

अभिकलन ट्रोमोग्राफी (CT स्कैन) और चुम्बकीय अनुनाद इमेजिंग शरीर में जैविक शारीरिक परिवर्तन को पृथक करता है। इनके द्वारा विभिन्न अंगों में होने वाले परिवर्तनों (जो कि भिन्न भिन्न रोगों के द्वारा होते हैं) का पता लगाया जा सकता है। शरीर में होने वाली आंतरिक रक्त स्त्राव, कैंसर, ऊतकों की मृत्यु, पथरी आदि का पता लगाया जा सकता है।

विभिन्न प्रकार की हृदय सबंधी समस्याएं, रक्त वाहिनियों की रुकावट, गुर्दे की बीमारियां, वृक्क की गाठं आदि का पता भी हम चुंबकीय अनुनाद इमेजिंग के द्वारा लगा सकते हैं। वर्तमान समय में अभिकनल ट्रोमोग्राफी का उपयोग बहुत ही सामान्य हो गया है। यह अभेद, सुरक्षित एवं बहुत ही आरामदायक तरीका है। अभिकलन ट्रोमोग्राफी एवं चुंबकीय अनुनाद इमेजिंग के द्वारा हम मुलायम ऊतकों जैसे कि मस्तिष्क, पेट के अंग, गुर्दा आदि को बहुत अच्छी तरह से जांच सकते है। इसमें सामान्य एक्स-किरणों के जैसे, गलती की संभावना कम रहती है। कैंसर के फैलाव की जांच करने के लिये भी अभिकलन ट्रोमोग्राफी उपयोगी है। रीढ़ की हड्डी के दर्द के निदान एवं उपचार में भी यह बहुत उपयोगी है।

अल्ट्रासाउण्ड द्वारा हम शरीर के आंतरिक जननांगों का अध्ययन करते हैं। जानवर के प्रैग्नेट होने का पता भी हम अल्ट्रासाउण्ड के द्वारा लगा सकते है। मूत्राशय संबंधी बीमारियों का अध्ययन भी हम अल्ट्रासाउण्ड से कर सकते हैं ।

एक्स-किरणों के द्वारा हम फ्रैक्चर, जोड़ा का दर्द, निमोनिया आदि का पता लगा सकते हैं। एक्स-किरणें सस्ती, सुरक्षित एवं कम समय लेती है। एकल फोटोन उत्सर्जन अभिकलन ट्रोमोग्राफी और पोजिट्रान इमिशन ट्रोमोग्राफी आणविक जीवन विज्ञान विवरण के क्षेत्रों का पता लगाने नें सक्षम होती है।

निम्नलिखित क्षेत्रों में परमाणु उर्जा का उपयोग महत्व पूर्ण रूप से किया जाता है :-

**1. तंत्रिका विज्ञान में उपयोग :-** न्यूरोइमेजिंग द्वारा उच्च रेडियोधर्मिता के क्षेत्र में मिस्तष्क की गतिविधियों को मापा जाता है। अल्जाइमर, रेबीज, ऐनसिफेलाइटिस आदि रोगों के निदान एवं उपचार में परमाणु ऊर्जा का उपयोग किया जाता है।

**2. हृदय विज्ञान में उपयोग :-** अथेरोस्कलेरोसिस और संवहनी रोग अध्ययन नैदानिक हृदय रोग विज्ञान में हम हृदय की बीमारियों, धमनियों की रुकावट, हृदय की कार्यक्षमता आदि का अध्ययन परमाणु ऊर्जा की सहायता से कर सकते है।

**3. मनश्चिकित्सा:-** कई यौगिको को C-11 याF-18 से रेडियोलेबल किया गया है जो जैविक मनोरोग में रुचि वाले न्यूरोरिसेपटर के साथ चुनिंदा तरीके से आबद्ध होते हैं। इस प्रकार परमाणु ऊर्जा के द्वारा हम मनोरोगों का निदान एवं उपचार कर सकते है।

**4. भेषजविज्ञान के क्षेत्र में :-** पूर्व नैदानिक परीक्षण में एक नई दवा का रेडियोलेबल देना और उसे जानवरों को देना संभव है। ऐसे स्कैन को जैव वितरण अध्ययन के रुप में संदर्भित किया जाता है।

**5. छोटे पशुओं की इमेजिंग के लिए :-** एक ऐसे लघु ट्रोमोग्राफ का निर्माण किया गया है जो इतना छोटा है कि एक पूर्ण सचेत और गतिशील चूहे द्वारा अपने सिर पर पहना जा सकता हैं। इसे रैत कैप कहते है।

**6. अन्य :-** पशु शरीर में हार्मोन्स के स्तर का पता लगाने में परमाणु ऊर्जा का महत्वपूर्ण योगदान । पशु विज्ञान एवं पशु चिकित्सा की सभी सबंध शाखाओं में परमाणु ऊर्जा का प्रमुख रुप से इस्तेमाल है। रेडियो सक्रिय पदार्थो का उपयोग कर हम कैंसर का निदान कर सकते है। विकिरण चिकित्सा भी परमाणु ऊर्जा का एक महत्वपूर्ण अनुप्रयोग है।

वर्तमान में परमाणु चिकित्सा, पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान के क्षेत्र में अति महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है। इस क्षेत्र में निरन्तर नए आविष्कार किए जा रहे है। अत: हमारे लिए यह अत्यन्त आवश्यक हो जाता है कि विकिरण के लाभों तथा उससे जुडे जोखिम को सही परिप्रेक्ष्य में समझे और इससे सबंधित समाज में व्याप्त भ्रांतियों के निराकरण के लिए आवश्यक उपाय करें । आने वाले समय में अन्य अविष्कार भी इस क्षेत्रे में होंगे जो पशु चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में नई क्रांति ला सकेंगे।

# परमाणु विकरणों द्वारा कैंसर का निदान एवं उपचार

डॉ. हेमन्त दाधीच
सहा. आचार्य एवं प्रभारी व्याधिकी विभाग
पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर

कैंसर कोशिकाओं की ऐसी निरन्तर वृध्दि है जो शरीर की स्वस्थ कोशिकाओं से मिलती जुलती है। इन कोशिकाओं का कोई उपयोगी कार्य नहीं होता और ना ही कोई सही रचनात्मक व्यवस्था होती है। इसका अभी तक कोई कारण पता नहीं चल पाया है।

कैंसर एक तरह की सूजन होती है पर सभी सूजन गांठ नहीं होती । कैंसर को इन्क्लामेशन और हाइपरप्लेसिया से भिन्न करना बहुत जरुरी है।

पैतृक कोशिकाओं से भिन्न कोशिकाओं की ऐसी वृध्दि जो बिना किसी कारण से अव्यवस्थित रूप से निरन्तर बढती है और दूसरे उतकों में भी फैल जाती है।

**इनफ्लामेशन और कैंसर में भिन्नता :-** इन्फ्लोमेशन कोशिकाएं निरन्तर बढ़ती है लेकिन इस वृध्दि का उद्देश्य सुरक्षा एवं खराब उत्तकों को हटाना है। जब ये मांग पूरी हो जाती है तब ये वृध्दि रुक जाती है और अतिरिक्त वृध्दि नष्ट हो जाती है।

**हाइपरफ्लेसिया और कैंसर में भिन्नता :-** हाइपरप्लेसिया बाहरी संवेदनाओं से हुई कोशिकाओं की व्यवस्थित वृध्दि को हायरप्लेसिया कहते है जो की बाहरी कारणों के हटाने से निरन्तर घटती जाती है।

कैंसर की पहचान :- ये निम्न तरीकों से की जाती है।

**1. चिकित्सकीय परीक्षण :-** तेजी से वृध्दि करती हुई गांठ जिससे की लगातार खून बहता रहे तथा उसमें घाव भरने की क्षमता न हो, कैंसर होती है।

**2. उतकीय-रोग परीक्षण अथवा बाईओप्सी :-** यह कैंसर की जांच का विश्वसनीय तरीका है।

**3. वितरण परीक्षण :-** इसके द्वारा हम आंतरिक अंग एवं हड्डियों के कैंसर की जांच कर सकते है।

**4. एक्सफोलिएटीव साइटोलॉजी :-** कैंसर कोशिकाएं साधारण कोशिकाओं की तुलना में कमजोर रूप से एक दूसरे से जुड़ी हुई रहती है। ये कोशिकाएं आसानी से अलग की जा सकती है। ये अलग की हुई कोशिकाएं एकत्र करके, उन्हें उपर्युक्त विधि के द्वारा स्टेन एवं परीक्षण किया जाता है। इसे पापा परीक्षण कहते है।

**5. रासायनिक और सिरालोजिकल परीक्षण :-** ये परीक्षण पशु चिकित्सा में भरोसेमंद नहीं है।

**विकिरण चिकित्सा :-** कैंसर एक ऐसी बीमारी है जिसमें कोशिकाएं असाधारण एवं अनियंत्रित रूप से वृध्दि करती है। विकिरण चिकित्सा में अधिक ऊर्जा कि एक्स-करणों के द्वारा कैंसर कोशिका की वृध्दि को रोका जाता है एवं उन्हें समापत किया जाता है।

विकिरण चिकित्सा में अधिक ऊर्जा की विकिरणों का उपयोग किया जाता है। कैंसर कोशिकाओं को नष्ट करते समय विकिरण साधारण कोशिकाओं को भी नुकसान पहुंचाती है। अच्छी खबर यह है कि साधारण कोशिकाएं विकिरणों के प्रभाव से उबर ( रिकवर )हो जाती है।

**विकिरण कैंसे दी जाती हैं :-** चिकित्सक केवल उपचार के लिये विकिरण का उपयोग कर सकते है। चिकित्सा कैंसर के निदान के लिये विकरण चिकित्सा के साथ किमोथैरेपी का उपयोग भी करते है। कुछ लोग कैंसर को शल्य क्रिया क्षरा निकलवा कर किरण चिकित्सा करवाते है। कैंसर ग्रसित व्यक्ति को कैंसर विशेषज्ञ से ही उपचार करवाना चाहिये । कैंसर विशेष प्रशिक्षण प्राप्त चिकित्सक है जो कि विकिरण का उपयोग कैंसर के निदान करने में निपुण होता है। विकिरण कैंसर विशेषज्ञ अन्य चिकित्सकों के साथ मिलकर विकिरण का प्रकार एवं मात्रा निर्धारित करता है।

विकिरण चिकित्सा दो प्रकार से की जाती है :-

1. बाहरी :- त्वचा के द्वारा
2. आंतरिक :- इन्जेक्शन या प्रत्यारोपण के द्वारा

**बाहरी विकिरण चिकित्सा के दौरान क्या होता हैं :-** इस प्रकार कि चिकित्सा में लोगों का रातभर अस्पताल में रुकने की जरुरत नहीं होती है। उन्हें सप्ताह में 5 दिन (2 से 8 सप्ताह) चिकित्सा के लिये अस्पताल आना पडता है। विकिरण को निरन्तर छोटी मात्रा साधारण कोशिकाओं को नुकसान से बचाती है।

यदि आप बाहरी विकिरण चिकित्सा का उपयोग कर रहे है तो प्रत्येक उपचार के दौरान चिकित्सकीय पोशाक पहनने के उपरांत ही विकिरण कक्ष में प्रवेश करना चाहिये। रोगी के मेज या समतल सतह पर बैठने के बाद चिकित्सक के कमरे से बाहर आ जाना चाहिये। उसके बाद एक बडे उपकरण जिसे की संवेदक कहते है एक निश्चित मात्रा में विकिरण का प्रवाह करती है कैंसर कोशिकाओं को नष्ट करने के लिये आवश्यक है। जिसे सामान्यतया स्याही या फेर टैटू से रुपरेखित किया जाता है।

विकिरण की दैनिक मात्रा प्राप्त करने के लिये सामान्यतया कुछ ही मिनटों का समय लेता है। जब संवेदक को चालू करते है तो हमें उस स्थिति में पडे रहना बहुत जरुरी है ताकि विकिरण हमारे शरीर के सही जगह पर प्रवाहित हो सके । जो लोग बाहरी विकिरण उपचार लेते है वो रेडियोएक्टिव नहीं होते है।

**विकिरण चिकित्सा के सामान्य दुष्प्रभाव :-**ये दुष्प्रुभाव मनुष्य की आयु, चिकित्सा के प्रकार और केस की स्थिति पर निर्भर करते है। कुछ मनुष्य सामान्य से ज्यादा थकान, भूख नहीं लगना और बालों का झडना महसूस करते है।

**1. थकान :-** यह विकिरण चिकित्सा का प्रमुख दुष्प्रभाव है जो कि चिकित्सा के दौरान एवं चिकित्सा के लगभग ६ हफ्ते बाद तक महसूस किया जाता है।

**2. त्वचीय नुकसान और परिवर्तन :-** उपचारित क्षेत्र के चारो ओर की त्वचा लाल एवं संवेदनशील हो जाती है। त्वचा में सूजन तथा संरचना में परिवर्तन हो जाता है।

**3. बालों का झडना :-** विकिरण के उपचार के बाद सिर और गर्दन के बाद झडने लगते है परन्तु सामान्यतया ये बल उपचार के ३ महीने बाद पु: आ जाते है ।

**4. सारे मुंह और दंत क्षय :-** यह दुष्प्रभाव सिर एवं गर्दन के विकिरण उपचार के बाद देखा जाता है।

**5. पेट और पाचन समस्याएं :-** यदि आप पेट के कैंसर का विकिरण उपचार करवाते है तो आपको भूख नहीं लगती है तथा दस्त हो लगता है। कुछ लोग सिर और गर्दन की विकिरण उपचार के दौरान मिर्गी और उल्टी आने भी महसूस करते है।

**6. रक्त परिवर्तन :-** विकिरण उपचार रोग प्रतिरोधक कोशिकाओं को नष्ट कर देती है। जिससे उनमें संक्रमण की संभावनाएं बढ़ जाती है तथा रक्त ट्रांसफ्यूजन की जरुरत बढ़ जाती है।

विकिरण उपचार लोगों की सामान्य वृध्दि को भी प्रभावित करता है। क्योंकि सामान्य कोशिका विकिरण उपचार के दौरान नष्ट हो जाती है। विकिरण उपचार के बाद निरन्तर जांच करवानी चाहिए तथा धुमपान और सौर विकिरण से बचना चाहिये।

# नाभिकीय ऊर्जा प्रेरित कृषि व औद्योगिक कार्यक्रमों की विवेचना

**विनय कुमार श्रीवास्तव**
वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी, निर्लवणीकरण प्रभाग, भामा परमाणु अनुसंधान केन्द्र

सत्तर के दशक मे डॉ. विक्रम साराभाई भूतपूर्व अध्यक्ष, परमाणु उर्जा आयोग ने नाभिकीय ऊर्जा प्रेरित कृषि व औद्योगिक सम्मिश्र (Nuclear Powered Agro-Industrial Complex) की परि कल्पना की थी । इस परिकल्पना में देश की परि पूर्ति के लिए अनुसंधान व विकास कार्य पर बल दिया गया था । इस सोच/दृष्टिकोण को साकार करने के उद्देश्य से भामा परमाण अनुसंधान केन्द्र में अति उर्जा खपत वाले प्रकियाओं (Energy Intensive Processes) पर आधारित विभिन्न तकनीकों का विकास कार्य शुरु किया गया जिसका संबंध कृषि व अन्य औद्योगिक उत्पादों से भी है । इनमें प्रमुख रूप से विद्युत-ताप आधारित फास्फोरस उत्पाद (Eectrothermal Process for production of Ecomental Phosphorus) के लिए भारतीय खानों से प्राप्त अपरिष्कृत फास्फेट चट्टानों का दोहन तथा उपयोग झिल्ली आधारित प्रतिलोम परासरण विधि (Membrane based Reverse Osmosis Process) द्वारा समुद्री जल से प्रक्रिया व पेय जल (Process of Portable Water) का उत्पादन व शुद्धीकरण, ताप सिध्दांत पर आधारित बहुचरणीय फ्लैश प्रक्रिया (Thermal Based Multi-stage Flash Process) द्वारा समुद्री जल का निर्लवणीकरण (Desatination) करना था । इन सभी तकनीकों के विकास में अनेकों परीक्षण प्रयोगिक व आरंभिक स्तर पर करने के पश्चात आज लगभग इन सभी तकनीकों के आधार पर देश में औद्योगिक स्तर पर संयत्र लगाये जा रहे हैं तथा तकनीकी हस्तान्तरण (Technology Transfer) भी किये गये हैं । इस सारिणी में उपर्युक्त अनुसंधान की कुछ उपलब्धियों पर चर्चा की गई है जिसका संबंध सीधे देश की कृषि व औद्योगिक क्षेत्रों से है ।

यूरेनियम से खाद्य पदार्थ (Uramium to Food Granis) दृष्टिकोण के आधार पर नाभिकीय उर्जा प्रेरित कृषि व औद्योगिक समिश्र (Nuclear Proceed Agro Industrial Compear) की परिकल्पना परमाणु ऊर्जा विभाग के भूतपूर्व अध्यक्ष डा. विक्रम साराभाई ने सत्तर के दशक में शुरु की थी । इसके पीछे देश के भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्री. लाल बहादुर शास्त्री जी का "जय जवान जय किसान" नारे के अंर्तगत देश के प्रमुख वैज्ञानिक संस्थाओं को योगदान के लिए एक अवाह्न था । इसके जरिये नाइट्रोजन व फास्फेट तत्व वाले खादों का तथा फसल बचाने के लिए संरक्षक रासायनिकों (Protective Chemical) का उत्पादन एवं साथ ही साथ जल संसाधनों को कही के लिए निर्लवणीकरण प्रक्रिया आदि के लिए शोध करना, एक महत्वपूर्ण कदम था । चित्र १ व चित्र २ में समिश्र परिकल्पना को संक्षिप्त रूप में दर्शाया गया है । इस परिकल्पना के आधार पर भामा परमाणु अनुसंधान केन्द्र में विद्युत-ताप प्रक्रिया द्वारा फॉस्फोरस (Eletro Thermal Process for Phosphers) उत्पादन के लिए देश मे प्राप्त फास्फेट चट्टानों जैसे खनिजों पर शोध कार्य, झिल्ली व ताप आधारित निर्लवणीकरण प्रक्रिया (Membrane & Thermal Based Desalination Process) पर शोध व विकास शुरु किये गये । इन सभी तकनीकों के विकास व शोध कार्य में अनेकों परीक्षण प्रयोगिक स्तर एवं पाइलट स्तर किये गये और आज इन सभी तकनीकों के आधार पर व्यवसायिक संयत्र लगाये जा रहे हैं तथा तकनीकी स्थानान्तरण भी किये गये हैं।

**१. ताप-विद्युत फास्फोरस तकनीक पर शोध कार्य एवं उपलब्धियाँ)**

भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण विभाग (Geological Survey of India) द्वारा प्राप्त आकड़ों

के आधार पर देश में पाये गये फॉस्फेट खनिजों को तालिका-१ में दिखाया गया है । इसमें मुख्य रूप से उन रासायनिक अवयवों (Chemical Censtients) को बताया गया है जिसका महत्व ताप विद्युत फॉस्फोरस तकनीक के लिए आवश्यक है ।

ताप विद्युत फॉस्फोरस उत्पादन की प्रक्रिया को निम्नलिखित दो चरण में रासायनिक क्रियाओं द्वारा समझाया जा सकता है (i) $P_2O_5$ गैस जो कि ट्राई कैल्सियम फॉस्फेट व सिलिका (Quest) से मिलकर बनता है तथा साथ ही कैल्सियम सिलिकेट घोल मल (Sludge) का बनना व (ii) कार्बन (Coke) द्वारा ($P_2O_5$) फॉस्फोरस पेंटा ऑक्साइड गैस से मिलकर फॉस्फोरस(P4) गैस व कार्बन मोनो आक्साईड (Co) गैस का बनना । इस सम्पूर्ण रासायनिक प्रक्रिया को जैसा कि वान बाजर (Van Wazger J.R) ने 1961 में प्रतिपादित किया था, नीचे बताया गया है ।

$2[Ca_3(PO_4)_2]$ (ठोस) + 6 $S:O_2$ (ठोस) + 10C (ठोस) + 1250-1700°C

(फास्फोरस चट्टान) (क्वार्ट्ज) (कोक)

(+) 730 कि कैलरी

6 [CaO.$S:O_2$ (द्रव) + $P_4$ (गैस) + 10CO (गैस)

जैसा कि उपर्युक्त प्रक्रिया से विदित है कि इसे जारी रखने के लिए अधिक मात्रा में ऊर्जा (उष्मा) की आवश्यकता है । साधारण उष्मा रसायन (Thermal Chemistry) के आधार पर देखें तो लगभग 6.84 mwhr या 6840 यूनिट प्रति टन फास्फोरस उत्पादन (730 कि. कैलरी प्रति फास्फोरस अणु) के लिए आवश्यक है। परन्तु वस्तुतः इसमें इससे दो-तीन गुनी अधिक ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है । इस अतिरिक्त उर्जा खपत के विभिन्न कारणों में मुख्य है ।

१) रासायनिक प्रक्रिया में प्राप्त उत्पादों से संवैदा उर्जा (Serzible-heat) का ड्रास एवं ठोस अभिप्रकारकों के पिघलने व उत्पादों के वाष्पीकरण में लगने वाली निगूढ उर्जा की आवश्यकता है ।

२) अपूर्ण रासायनिक प्रक्रिया (Incomplete reaction) अथवा प्रणाली में निदित अपूर्ण प्रति प्राप्ति कारणों से उर्जा ह्रास

३) विभिन्न अभिकारकों में पाई जानेवाली लोह ऑक्साईड, कार्बोनेट फ्लोराइड एवं आद्रता आदि में खपत होनेवाली अन्य रासायनिक क्रियाओं से होनेवाली अतिरिक्त उर्जा खपतों के कारण होनेवाले ह्रास

४) विभिन्न प्रक्रियाओं मे प्रयुक्त उपकरणो में होनेवाली प्रकृति में ह्रास आदि ।

तालिका-२ में एक टन प्रति दिन क्षमता की बी.ए.आर.सी. लगाये गये फास्फोरस प्रयोगिक पायलट संयंत्र के कुछ विशिष्ट तकनीकी विवरण दिये गये हैं । राजस्थान एवं मध्य प्रदेश में पाये गये खनिजों के मात्रा के आधार पर झामार कोत्रा (उदयपुर,राज.) एवं झबुआ (म.प्र.) अभिप्रभिकारकों को लेकर ज्यादा प्रयोग किये गये हैं। अन्य स्थानों से प्राप्त अभिकारकी मुख्यतः फास्फेट चट्टानों की उपयोगिता की जाँच लैब स्तर पर की गई । सिलिसियस अधिक की मात्रा वाले फॉस्फेट चट्टानों को ध्यान में रखते हुए व्यवसायिक स्तर पर इस तकनीक का दोहन करने के उद्देश्य से आरम्भिक परिकल्पना का कार्य पूरा कर दिया गया । इस संबंध में हरियाणा, उ.प्र., म.प्र., राजस्थान इन्ड्रट्रियल डेवलेपमेंट कार्पोरेशन को तकनीकी हस्तानास्तरण व जानकारी देने से देश की लगभग 300 करोड़ रुपये का मूल्यांकित सिलिसियस रॉक फॉस्फेट की उपयोगिता होने का न केवल फायदा हुआ बल्कि इस आवश्यकता के लिए की जानेवाली आयातों को भी कम किया जा सका । तालिका-३ में फास्फोरस तकनीकी विकास को विश्व के अन्य तकनीकों की के तुलनात्मक अध्ययन को उनके मुख्य प्राचलिक (Main Parameters) आधार पादर्शाया गया है । चित्र ३ में फॉस्फोरस सयंत्र में प्रयुक्त उपकरणों का सममितीय दृश्य बताया गया है । चित्र-४ में फॉस्फोरस से बनाये जानेवाले विभिन्न ।

**निर्लवणीकरण तकनीकों पर शोध कार्य एवं उपलब्धियाँ**

जल इस धरा की बहुमूल्य धरोहर है । इसके बिना जीवन के बारे में सोच पाना असंभव है। कुछ उदाहरणों को छोड़ कर हमारे लिए उपलब्ध जल को पीने योग्य नहीं कहा जा सकता है । पेय जल की आवश्यकता हो अथवा उद्योगों आदि में काम आनेवाले जल की बात हो, इसे बिना किसी प्रकार के शोधन हम प्रयोग मे नहीं ला सकते । ब?ती आबादी, औद्योगिकरण एवं जीवन शैली मे बदलाव के कारण, जल की माँग ब?ती ही जा रही है। जल संचय, प्रंबधन एवं समुचित वितरण निश्चित ही इस बढ़ती माँग को पूर्ण करने के लिए एका समाधान है परन्तु साथ ही साथ समुद्री जल का निर्लवणीकरण तथा अपशिष्टों का शुद्धीकरण एवं पुनः चक्रण इस समस्या के समाधान में बहुत बड़ा योगदान दे सकता है। भारत के संदर्भ में हमारे जीवन में जल के महत्व का अनुमान तालिका में दिये गये आकड़ों से लगाया जा सकता है । विश्व के संदर्भ में भारत की उपलब्ध जल की स्थिति जल दबाव (Water Stressed) वर्ग मे हैं जो कि लगभग 1500 घ.मी. प्रति वर्ष है जब कि जल की अधिकता वाले देशों में यह 2000 घ.मी. प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष के लगभग अथवा उससे अधिक आँकी गई है ।

पानी की इस बढ़ती माँग की आपूर्ति के लिए विभिन्न निर्लवणीकरण तकनीकों के विकास व उपयोगिता का महत्व काफी बढ़ गया है । तालिका में दिये गये विश्व की निर्लवणीकरण सयंत्रो की क्षमता का विश्लेषण करे तो निष्कर्ष निकलता है कि १९७० के पश्चात संयंत्रों की कुल क्षमता में विशेष वृध्दि हुई है और इसी कारण से, निर्लवणीकरण व जल शुद्धीकरण तकनीकों पर शोध व विकास कार्य भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र में भी शुरु किया गया एवं इसमें प्रतिलोम परासरण एवं विद्युत अपोहन (Reserve Sumoses & Electro Dialysis) व अन्य ताप सिध्दान्त पर आधारित निर्लवणीकरण (Thermal Based Desatination Processes) प्रक्रिया जैसे एम.एस.एफ.(MSF) एम.ई.डी. (MED) व एल.टी.ई (LTE) आदि मुख्य रही है ।

हमारे देश में, 1988 के पश्चात प्रतिलोम परासरण व विद्युत-आपोहन सिध्दान्तों पर आधारित कई सयंत्र लगाये गये जो कि मुख्य रूप से पेय एवं औद्योगिक आवश्यकताओं के लिए जल की आपूर्ति करते हैं । तालिका स एवं द में पिछले कुछ सालों में किये गये आवसन व झिल्ली विधत पर आधारित कई निर्लवणीकरण प्रयोगिक संयंत्रों की सूची बताई गई है जिसका सफलता पूर्वक प्रदर्शन किया गया है । इन अनुभवों के आधार पर हाल ही में ६३ लाख लीटर प्रति क्षमता वाला एक एम.एस.एफ., आर.ओ. पर वृध्द पर मिश्रीत संयंत्र (Mybrid MSF - RO Desationation Peanch) मद्रास परमाणु बिजलीघर कलवक्कम में लगाया गया है। जिसकी प्रक्रिया प्रतालीव में दर्शाया गया है । इस संयंत्र के लिए आवश्यक वाष्प, बिजली एवं समुद्री जल, परमाणु बिजली घर से उपलब्ध होगें एवं इस संयंत्र से बनने वाली अतिशुध्द प्रक्रिया जल के कुछ मांग को बिजलीघर में वाष्प उत्पादन संयंत्र में भेजा रहा है । तथा शेष मांग को अन्य आवश्यकताओं के लिए इस्तेमाल किया जा रहा है । इस सफल प्रदर्शन के बाद बड़ी क्षमता वाले स्वदेशी निर्लवणीकरण संयंत्र द्वारा देश के कई भागों में जलापूर्ति की जा सकती है । विभिन्न निर्लवणीकरण विधियों की मुख्य तकनीकी विशेषताओं को तालिका-फ में बताया गया है । जीनका पानी से धुलित कण पदाथों की सांद्रता, श्रीत, प्राप्तजल की गुणवत्ता, ऊर्जा की उपलब्धता एवं व्यापारिक जल शुध्दीकरण एवं जल पुनःचक्रण की आवश्यकता शोध कार्य व उपलब्धियाँ शुध्द पानी वह पानी है जिसमें किसी भी तरह का कोई पदार्थ दृश्य अथवा अदृश्य रूप से न घुला हो । वैज्ञानिक इसे नगण्य विशिष्ट विद्युत चालकता (Specific Conductance) अथवा कुल घुलित पदार्थ की शून्य मात्रा वाले जल को कहते है । हम इसे ताजा बने असदित जल अथवा ओस की बूँद के रूप में समझ सकते है । विभिन्न गैसों एवं पदार्थों के संपर्क में आकर यह जल अपनी शुध्दता खो देता है । वर्षा जल

में विभिन्न अकार्बनिक, कार्बनिक अशुद्धताओं के साथ साथ जीवाणु भी पनपने लगते हैं। जिससे रासायनिक अशुध्दता के साथ-साथ जैवकीय अशुध्दता (Biological Contanination) भी पानी को अति दूषित बना देती है ।

सामान्यतः धरातलीय जल में जीवाणु तथा अघुलनशील बाह्य पदार्थ अधिक मात्रा में होते हैं । परन्तु घुलित पदार्थ लगभग 100-200 मि.ग्रा. प्रति लीटर तक पाये जाते है । समुद्री जल में घुलित पदार्थ लगभग 35000 - 45000 मि.ग्रा. प्रति लिटर पाये जाते है। भूमिगत पानी में जैविक व गैसीय अशुध्दता (कार्बन डाई ऑक्साइड, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन व सल्फर के ऑक्साइड आदि) कम मात्रा में पायी जाती है । समुद्र के किनारे बसे कस्बों व गावों मे नदी के किनारे बसे शहरों की अपेक्षा भूमिगत पानी में खारापन ज्यादा मात्रा में पाया जाता है । पेय जल की अपेक्षित गुणवत्ता के लिए भारतीय मानक (IS-10500(1991) भी बनाये गये है । जिसे तालिका-ज में बताया गया है ।

जीवाणु अशुध्दता को दूर करने की विधि को रोगाणुनाशक कहते है । सामान्यतः पानी को कुछ समय तक उबालने से ज्यादातर जीवाणु नष्ट हो जाते है । परन्तु इसके लिए कुछ रसायनों (Sodium Hypocheoride, Calcium Hypocheoride, Chlorim, Ozone) के साथ-२ परावैगनी तरंगों का भी प्रयोग किया जाता है । जल के शुध्दीकरण के लिए रसायनों की एक नियंत्रित मात्रा (Cheorine Zon; 1-2 mg/Litre) ही डाली जानी चाहिये । "जीरो-बी" नामक, प्रचलित फिल्टर, आयोडीन रसायन की गुणवत्ता पर निर्भर है । "सिम्फोनी" क्रिस्टल क्लीअर व भा.प.अ.कें. मे विकसित विभिन्न नामों के वाटर फिल्टर भी बाजार में उपलब्ध है जो कि मिलती तकनीक पर आधारित है । रसायनों के प्रयोग से जहाँ एक ओर स्वाद पर असर पड़ता है वहीं मीथेन जैसे कैसर-रोगजनक यौगिकों के बनने की भी संभावना रहती है जो कि पानी में उपस्थित कुल कार्बनिक यौगिकों की मात्रा पर निर्भर करता है । इस रोगजनक यौगिक की अधिकतम मात्रा जल की गुणवत्ता में 100(x106) मी.ग्रा. प्रति लीटर निर्धारित की गई है । भा.प.अ.केन्द्र ने जल शध्दीकरण के घरेलू उपाय (Domestic Water Purifier) जिसमें जीवाणुओं पानी के (Unicro Organisation) से रहित पाया जा रहा है वहीं अन्य विषेली अशुध्दीयों जैसे आर्सोनिक, लोहतत्व फ्लोराइड आदि को भी काफी हद तक दूर किया जा सकता है । इन तकनीकों का स्थानान्तरण कई कंपनियों को किया गया है ।

वैज्ञानिक सर्वेक्षण के अनुसार प्रत्येक 100 लीटर प्रयोग किये गये जल से कम से कम 4 लीटर जल को अवशेष हेतु भेजा जाता है । कुछ प्रमुख उद्योगों जैसे बिजलीघर, कागज, स्टील, कपड़ा, चमड़ा एवं दवा आदि को देखें तो अविशिष्ट जल की एक बहुत बड़ी मात्रा को निर्लवणीकरण तकनीक विशेष रुप से प्रतिलोम परासरण विधि द्वारा पुनः उपयोगी बनाया जा सकता है । शुरु-शुरु में चेन्नई के आस-पास के औद्योगिक क्षेत्रों में 20-30 लाख गैलन प्रतिदिन क्षमता वाले संयंत्र लगाये गये परन्तु बाद में अन्य बड़े शहरों में (जैसे मुम्बई, गुना, दिल्ली) भी जल पुनः चक्रण (Water Recycle/Reuse) संयंत्र लगाये गये हैं और निरंतर इनका विस्तार भारत के अन्य प्रदेशों में हो रहा है ।

**२.२ निर्लवणीकरण विधियों का मूल्यांकन, निष्कर्ष एवं परिचर्चा**

पिछले कुछ दशकों में महानगर-पालिकाओं द्वारा वितरित जल के दरों में लगभग 8-10 गुना वृद्धी, बढ़ती हुई जल की माँग, औद्योगिकरण के कारण बढ़ते जल संसाधनों को दूषित होना आदि सभी कारणों ने निर्लवणीकरण तकनीकों पर किये जानेवाले शोध एवं विश्वास कार्य को बहुत महत्वपूर्ण बना दिया । विश्व में निर्लवणीकरण संयंत्रों की कुल संख्या जहाँ 14000 के लगभग होगी व कुल क्षमता लगभग 35000 करोड लीटर प्रतिदिन की है वहीं अभी भारत में इसकी कुल क्षमता का केवल एक प्रतिशत ही आँकी जा रही है । बड़े संयंत्रों में समुद्री

जल कैसे निर्लवणीकरण द्वारा पेय जल का मूल्य लगभग 5-7 पैसे प्रति लीटर है ।

समुद्री जल का निर्लवणीकरण निश्चय ही इस बढ़ती हुई माँग को पूरा कर सकती है परन्तु मूल लागत एवं प्रचालन मूल्य के आधार पर देखें तो अविशिष्ट जल, कम खारेपन वाले जल स्त्रोतों को आधार मान पैमानेपर व समुद्र के किनारे प्रदेशों /कस्बो के विकास के लिए समुद्री जल आधारित मिश्रित (Hybrid Thermal & Membrane Based Desatination Plants) निर्लवणीकरण संयंत्र लगाना उचित होगा तो छोटे पैमानेपर जल शुध्दीकरण की अन्य विधाओं का उपयोग श्रेयस्कर है। उद्योगों से निकलने वाली अविशिष्ट उष्मा, सौरऊर्जा तथा प्राकृतिक रूप से समुद्र की विभिन्न गहराइयों में ताप के अंतर को आधार मान कर छोटे व मध्यम क्षमता वाले ताप आधारित आसवन व झिल्ली विधि से समुद्री जल का निर्लवणीकरण कर पेय व प्रक्रिया जल बनाने पर शोध व विकास कार्य भी चर्चा का विषय है। और साथ ही देश में निर्लवणीकरण से संबंधित उद्योगों को बढ़ावा देना भी जरुरी है ।

प्राकृतिक जल संरक्षण, समुचित जल वितरण, विशुध्द जल के प्रयोग से अच्छे सेहत होने से चिकित्सकीय खर्चों की कमी आदि के महत्व पर प्रचार प्रसार में जहाँ एक ओर सभी नगरपालिकायें प्रयत्नशील है वहीं दूसरी और जल संरक्षा को ध्यान में रखकर भविष्य में बड़े स्तर पर निर्लवणीकरण तकनीकों पर आधारित कई संयंत्र लगाने के लिए अग्रसर हैं । इन तकनीकों पर निरंतर किये जा रहे शोध व विकास कार्य, दोनों ही मूल व प्रचालन मूल्यों को कम से कम करने में सहायक होंगी एवं इसमें सरकारी गैर सरकारी मूल्यों को कम से कम करने में सहायक होंगी एवं इसमें सरकारी, गैर सरकारी विश्व विद्यालय व अन्य सभी संस्थान प्रयत्नशील है ।

**ताप-विद्युत फास्फोरस तकनीक एवंम इस क्षेत्र में उपलब्धियां**

फॉस्फोरस एक बहुउपयोगी तत्व है जिसकी मानव जीवन में अत्यन्त आवश्यकता है । उर्वरक एवं कीटनाशकों के घटक स्वरुप कृषि उत्पादों के लिए यह महत्वपूर्ण आवश्यकता को पूरा करने में सहायक होता है । भारत में बड़ी मात्रा में उर्वरक का आयात होता रहा है । उस संदर्भ में फॉस्फोरस की आवश्यकता को पूरा करने के लिए भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र में ताप-विद्युत फॉस्फोरस तकनीक पर कार्य सत्तर के दशक में प्रांरभ किया गया । इन अनुसंधानो की सहायता तकनीक का विकास कर उसे व्यवसायिक संयंत्रों हेतु हस्तांतरित किया गया ।

भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त आंकड़ों के आधार पर भारत में पाये गये फॉस्फेट खनिजों का विवरण निम्नतालिका में है । विवरण उन अवयवों का है जो ताप-विद्युत फॉस्फोरस तकनीक के लिये आवश्यक है ।

| खदानों के स्थान | अनुमानित मात्रा (दो लाख टन) | $P_2O_5$ | CaO | $SiO_2$ | $Fe_2O_3$ | $CO_2$ |
|---|---|---|---|---|---|---|
| १. उदयपुर - राजस्थान | ५० | २०-३६ | ३२-५२ | ४-३० | ०.५-३ | १-३ |
| २. झबुआ - म.प्र. | २० | २२-३५ | ४२-५२ | ४-२२ | १-२ | १.५-२ |
| ३. सागर - म. प्र. | १५ | २४-३४ | ४३-५२ | ४-२२ | २-७ | २-३ |
| ४. मसूरी - उत्तराखण्ड | ४५ | १६-२६ | ४६-५४ | ६-२२ | २-७ | २-१८ |
| ५. सिंहभूमि - बंगाल | ३.५ | २२-३५ | ४५-२२ | ७-१२ | ४-६ | २-५ |
| ६. ललितपुर - उ.प्र. | ४ | २४-३२ | ४३-५२ | १०-२० | २-५ | २-३ |
| ७. कासीपट्टनम - आं. प्र. | १.७ | ३०-४० | ४६-५५ | २-५ | १-२ | ०.५-१ |

ताप-विद्युत फॉस्फोरस उत्पादन की प्रक्रिया जे.आर. वानवाजेर ने 1961 में प्रतिपादित की थी । यह दो चरणों में पूरी होती है । पहले ट्राई केल्सियम फास्फेट व सिलिका (Quartz) को मिलाने से $P_2U_5$ एवं केल्सियम सिलिकेट धातुमल (Slag) बनता है । $P_20_5$ को कार्बन (Coke) व्दारा (Pu) एवंम Co में बदला जाता है ।

इस संपूर्ण प्रक्रिया में काफी मात्रा में उष्मा की आवश्यकता होती है । एक टन फॉस्फोरस उत्पादन के लिए रसायनिक गणनानुसार करीब 6.84 MWHr उष्मा की आवश्यकता होती है । परंतु व्यवहारिक रुप से दो या तीन गुना अधिक उष्मा निम्न कारणों से खपत होती है ।

१) रासायनिक प्रक्रिया में प्राप्त उत्पादकों की संवर्ध उर्जा एवं ठोस अभिकारकों के पिघलने एवम् वाष्पीकरण में लगनेवाली क्वथन ऊर्जा ।
२) अभिकारकों में उपस्थित अन्य खनिजों में खपत होनेवाली ऊर्जा ।
३) अभिकारकों में उपस्थित अन्य खनिजों में खपत होनेवाली ऊर्जा
४) प्रयुक्त उपकरणों में अनावश्यक ऊर्जा ह्रास

उपरोक्त कार्य एवंम् इस लेख में आगे वर्णित निर्लवणीकरण प्रक्रिया में नाभिकीय ऊर्जा के उपयोग की कल्पना की गयी है ।

कार्य प्रणाली विकसित करने हेतु भामा परमाणु अनुसंधान केन्द्र में देश में उपलब्ध खनिजों पर प्रयोग किये गये । झामार कोत्रा (उदयपुर-राजस्थान) एवं झबुआ (मध्यप्रदेश) से प्राप्त अभिष्कार कों लेकर प्रारंभिक प्रयोग किये गये। अन्य स्थानों से प्राप्त मुख्यत: फास्फेट चट्टानों की उपयोगिता प्रयोगशाला स्तर पर की गयी । सिलसियस की अधिक माया वाले फास्फेट चट्टानों को ध्यान में रखते हुए, व्यवसायिक रोहन हेतु आरंभिक परिकल्पना का कार्य पूरा कर दिया गया । इस संबंध में हरियाणा, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश व राजस्थान की औद्योगिक विकास कार्पोरेशन से संपर्क किया गया । विकसित तकनीक का उपयोग व हस्तानतरण कर सिलसिमम रॉक फॉस्फेट का दोहन कर देश में लगभग 300 करोंड़ रुपये का फायदा एवं आयातों को कम करने का महत्व पूर्ण कार्य किया गया ।

इस कार्य पर प्रकाश डालने हेतु निम्न जानकारीयाँ संलग्न है ।

तालिका-३ विकसित फॉस्फोरस तकनीकी एवं विश्व की अन्य तकनीकों का तुलनात्मक अध्ययन.

चित्र-३ फॉस्फोरस संचय में प्रयुक्त उपकरणोंका सममितीय दृश्य

चित्र-४ विभिन्न रसायनों एवं कीटनाशक खाइयों में फॉस्फोरस के विभिन्न उपयोग

चित्र-५ ताप-विद्युत प्रक्रिया व्दारा फास्फोरस उत्पादन विधि का आरेखीय विवरण

## परिचय

श्री विनय कुमार श्रीवास्तव ने एच.बी.टी.आई, कानपुर से रासायनिक अभियांत्रिकी में एम.टेक की उपाधि अर्जित की है। वर्तमान में आप तापीय निर्लवणीकरण अनुभाग, भा.प.अ.केन्द्र के अध्यक्ष के रुप में कार्यरत है । श्री श्रीवास्तव कई राष्ट्रीय एवं अन्तराष्ट्रीय संगठनों, परिषदों से सक्रिय रूप से जुड़े हैं । इस समय निलर्वणीकरण औद्योगकी से संबंधित शोधों, विकास, विकास कार्यों तथा परियोजनाओं के बारे आप गहन अध्ययन व कार्य कर रहे है । आप ने राष्ट्रीय व अन्तराष्ट्रीय स्तर पर लगभग 70 से अधिक शोध पत्र और लेख प्रकाशित एवं प्रस्तुत किये हैं ।

# पशुओं के स्वास्थ्य और रोग के विभिन्न मानकों के आकलन में रेडियो आइसोटोप तकनीक की अनुकूलता

**ए. के. कटारिया और नलिनी कटारिया**
पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान महाविद्यालय
राजस्थान पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, बीकानेर

जैविक प्रणालियों में रेडियो आइसोटोप तकनीक अत्यधिक संवेदनशीलता तकनीक है और इनका प्रयोग पशु स्वास्थ्य और रोगों में और भी अधिक परिमाणिक रूप में किया जा सकता है। रेडियो आइसोटोप तकनीकें विशेषकर रेडियोमम्युनोअससे का अनुकूलन, विभिन्न हार्मोन, प्रतिजन या एंटीबॉडी के आधार स्तर आंकड़ें उत्पन्न करने के लिए आवश्यक है, जो कि प्रजनन, हड्डी चिकित्सा, ऊतकों की मरम्मत, तनाव प्रबंधन, दवाओं और रोग निदान में अनुमान लगाने के लिए किया जाता है।

विकसित देशों में पशुधन उत्पादकता में उल्लेखनीय सुधार, जानवरों के बढ़ने और किस प्रकार पैदावार प्रभावित हो सकता है, और उसकी रक्षा कैसे की जाए, अनुसंधान के माध्यम से हासिल हुए हैं। वे पशु उत्पादकता और स्वास्थ्य को बढाने के लिए परमाणु और संबंधित तकनीकों का लाभ उठाते हैं जबकि हमें अभी तक पशुधन उत्पादों की बढ़ती मांग के महत्व का एहसास नहीं है।

पशु पोषण, प्रजनन और पशुओं के स्वास्थ्य में सुधार, परमाणु तकनीक के उपयोग के साथ संभव हो गया है। विभिन्न पशुओं की उत्पादकता, जैव प्रक्रिया में रेडियो आइसोटोप के प्रयोग के माध्यम से बढ़ाई जा रही है।

रेडियो आइसोटोप का उपयोग इन विट्रो में जैविक नमूनों के अणुओं को अंकित करने के लिए किया जा सकता है जिससे शरीर के तरल पदार्थ, संक्रमक प्रतिजनों और कई दवाओं के घटकों का निर्धारण किया जा सकता है। इन प्रक्रियाओं को रेडियोइमम्युनोअससे कहते हैं और निर्मित कीट, प्रयोगशाला के उपयोग के लिए, सरल और सटीक परिणाम देते हैं। हाँलाकि, रेडियोइमम्युनोअससे कीट की लागत और कीटों की नियमित आपूर्ति, रेडियो रसायन को संभालना और तत्पश्चात रेडियोधर्मी अपविष्ट के निपटन से संबंधित समस्याओं के अलावा अभिकर्मकों के छोटे जीवन का होना एक प्रमुख समस्याओं में से एक है। इसके अलावा, बड़े स्वचालित गामा काउंटर महंगे हैं और इनका रख रखाव मुश्किल है।

रेडियो आइसोटोप का स्वास्थ्य, बीमारी और खाद्य सुरक्षा में असीमित उपयोग है, लेकिन यह पत्र रेडियो आइसोटोप तकनीकों के अनुकूलन की चर्चा करता है, जो इन विट्रो में विभिन्न मानकों के आकलन में उपयोग किया जा सकता है।

**पशु प्रजनन**

अति संवेदनशील रेडियाइमम्युनोअससे, $^{125}I$ या $^{125}H$ के उपयोग से विकसित किया जा चुका है जिनका उपयोग प्रजनन को नियंत्रित करनेवाले रक्त में परिसंचरित हारमोन की सूक्ष्म मात्रा को मापने के लिया किया जाता है। रेडियाइमम्युनोअससे ने पशुओं के सुनिश्चित प्रजनन का समय संभव कर दिया है। साथ ही इसका उपयोग गर्भावस्था का पहले से अनुमान लगाने, पशुओं का सही समय पर गर्भाधान करने, प्रजनन विकारों के लिए सुधारात्मक उपाय, कृत्रिम गर्भाधान और भ्रूण स्थानांतरण की दक्षता में सुधार के लिए किया जाता है।

हाल के वर्षों में पशुधन उत्पादकता को गर्भावस्था या स्तनपान के विभिन्न चरणों मे वृद्धि हुई हारमोन के स्तर के ज्ञान के माध्यम से सुधारा जा सकता है (प्रजनन सुधार द्वारा)। पशु का ताव में

आना, गर्भाधान और प्रसव का सही समय, विभिन्न होर्मोनों का प्रोफाइल की जानकारी के द्वारा पता लगाया जा सकता है। इस तरह, प्रजनन क्षमता अनुकूलित किया जा सकता है।

**पशु स्वास्थ्य**

रोग निदान के परम्परागत तरीकों में सूक्ष्मजीव का पृथक्करण और माइक्रोस्कोपी द्वारा प्रत्यक्ष पता लगाना और इमम्युनोअससे आमतौर पर लंबा समय लेता है, जबकि न्यूक्लिक एसिड संकरण तकनीक बहुत सार्थक और संवेदनशील साबित हुआ है। यह संकरण तकनीक अद्वितीय है क्योंकि यह जीव जीनोम पर केंद्रित है, उनके उत्पादों पर नहीं।

सबसे आम डीएनए जांच प्रौद्यौगिकी में इस्तेमाल लेबल रेडियोधर्मी ($^{35}P$, $^{35}P$, $^{125}I$) है जो कई उपलब्ध तकनीकों के द्वारा न्यूक्लिक एसिड में सीधे जोड़ दिए जाते हैं। संकरण के बाद, जांच-लक्ष्य का तरल जगमगाहट की गिनती करके या ऑटो रेडियोग्राफी से लगाया जाता है। यह तकनीक बहुत ही संवेदनशील है। हाल ही में, टेकनिशियम 99m का उपयोग कुत्ते और बिल्लियों मे थाईरोइड की वृद्धि, घोड़ों में लगड़ापन और जिगर में कई खराबियों के निदान में, नियमित रूप से किया जाता है।

**उपापचय अध्ययन**

रेडियोधर्मी अमीनो अम्लों का उपयोग, उत्तक पालन कोशिकाओं में उपापचय अंकन के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। प्रोटीन लेबलिंग के लिए सबसे अधिक रेडियोधर्मी अग्रगामी ($^{35}S$) मेथीयोनिन प्रयोग किया जाता है क्योंकि इसके क्षय का पता लगाना आसान है और यह आसानी से प्रोटीन में शामिल हो जाता है और इसकी अधिक निगमन गयी लेबल की विस्तृत रैखिक श्रृंखला है। अन्य इस्तेमाल किये गए अमीनो अम्लोंके लेबल हैं: ($^{3}H$)प्रोलीन, ($^{35}S$)सिस्टीन और ($^{3}H$)ल्युसीन।

**जैव रासायनिक विश्लेषण**

जैव रासाजनिक विश्लेषण आमतौर पर इन विट्रो किया जाता है और यह जैविक पदार्थ जैसे एंजाइमों, स्टेरॉयड हार्मोन और विटामिन, रक्त, मूत्र, लार या शरीर के अन्य तरल पदार्थ मे सूक्ष्म मात्रा को नापने के हेतु किया जाता है। इन परीक्षणों में रेडियो आइसोटोप का प्रयोग जैविक नमूनों के अणुओं को अंकित करने के लिए किया जा सकता है और इनकी कम मात्रा होने पर भी पता लगाया जा सकता है। ये प्रक्रियायें आमतौर पर थाईराइड विकारों, एलर्जी, कैंसर और प्रजनन समस्याओं जैसे रोगों का निदान करने के उपयोग में आती हैं।

आण्विक और कोशिकीय जीवविज्ञान

रेडियोधर्मी आइसोटोप $^{3}H$, $^{14}C$, $^{32}P$, $^{35}S$, $^{86}Rb$, $^{125}I$,कोशिका या जीवाणु, खमीर, पौधौं, पशुओं के उपापचय पहलुओं को समझने में और आनुवांशिक पदार्थ की व्याख्या में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते आये हैं। रेडियो आइसोटोप से अंकित उपापचय अणु, स्थायी अणुओं का पता लगाते हैं और ऑटोरेडोयोग्राफिक या गिनती माप इसकी जानकारी प्रदान करते हैं। उदाहरण के लिए 32S, DATP का उपयोग प्रोटीन का फोस्फोरिलेशन ज्ञात करने के लिए लिया जाता है। इसी प्रकार $^{35}S$ या $^{125}I$,अंकित प्रोटीन का एपयोग कुछ विशिष्ट व्यंजक के मूल्यांकन के लिए किया जाता है। $^{35}S$, $^{33}P$ या $^{35}P$, इस्तेमाल DNA के संश्लेषण के लिए और विशिष्ट जीन का पता लगाने के लिए किया जाता है।